मंगलाचरण

सिद्धं सुद्धं पणमिय, जिणिंदवरणेमिचंदमकलंकं।
गुणरयणभूसणुदयं, जीवस्स परूवणं वोच्छं ॥1॥

www.JainKosh.org

संजलणणोकसायाणुदओ मंदो जदा तदा होदि।
अपमत्तगुणो तेण य, अपमत्तो संजदो होदि ॥45॥

- अर्थ - जब संज्वलन और नोकषाय का मन्द उदय होता है तब सकल संयम से युक्त मुनि के प्रमाद का अभाव हो जाता है। इस ही लिये इस गुणस्थान को अप्रमत्तसंयत कहते हैं ॥45॥

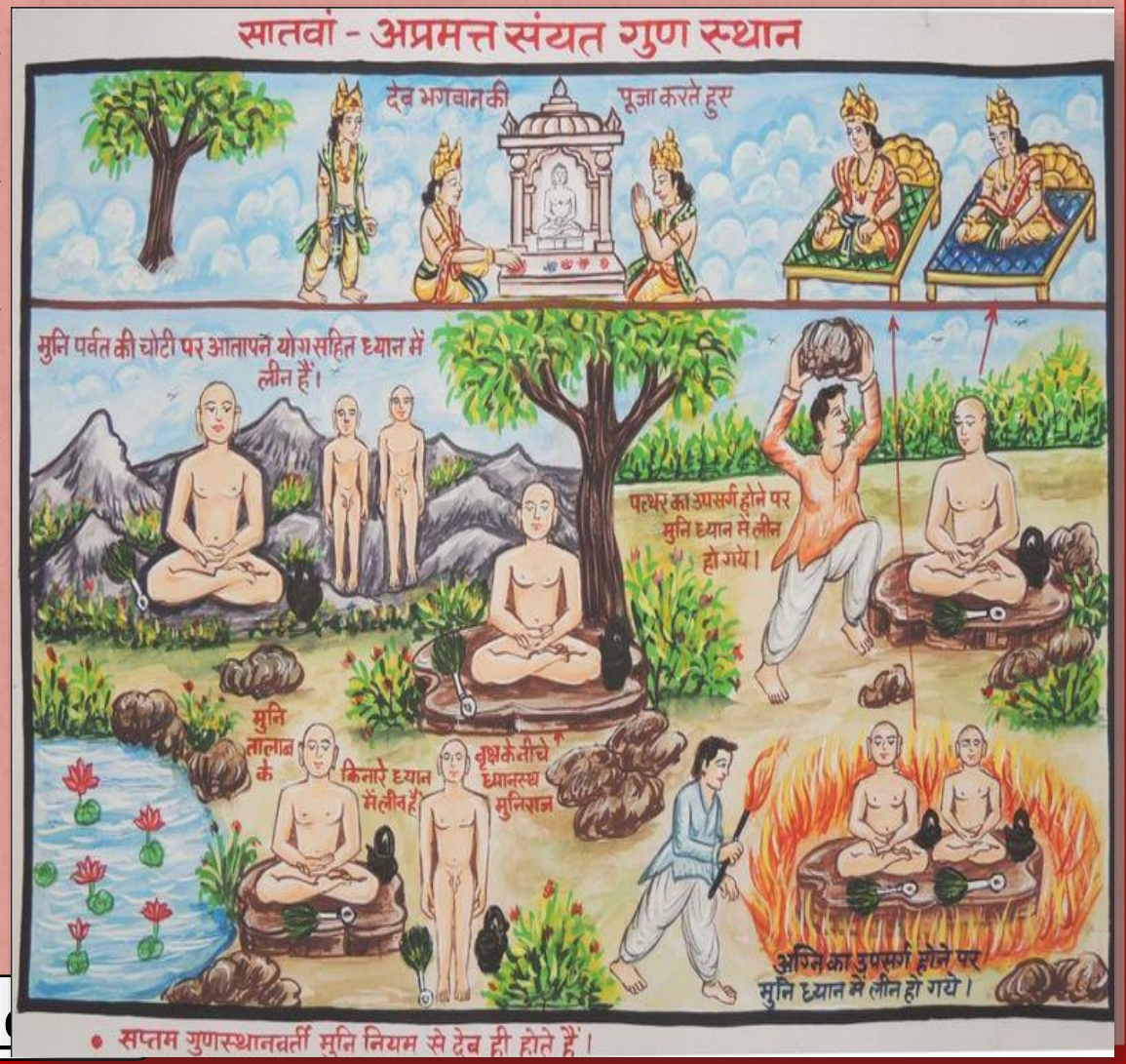

www.JainKosh.

अप्रमत्तसंयत:

मुनि जीवन का प्रथम गुणस्थान

छठवाँ गिरने पर प्राप्त होता है

7 अप्रमत्तविरत

6-प्रमत्त विरत

अप्रमत्त-विरत

परिणाम

- प्रमाद का अभाव
- सकल संयमयुक्त

निमित्त

- संज्वलन और नोकषाय का मंद उदय
- 3 कषाय चौकड़ी का अनुदय

www.JainKosh.org

णट्ठासेसपमादो, वयगुणसीलोलिमंडिओ णाणी।
अणुवसमओ अखवओ, झाणणिलीणो हु अपमत्तो ॥46॥

- अर्थ - जिस संयत के सम्पूर्ण व्यक्ताव्यक्त प्रमाद नष्ट हो चुके हैं,
- जो समग्र ही महाव्रत, अट्ठाईस मूलगुण तथा शील से युक्त है,
- सम्यग्ज्ञान में तथा मोक्ष के कारणभूत धर्म्यध्यान में लीन रहता है,
- ऐसा अप्रमत्त मुनि जब तक उपशमक या क्षपक श्रेणी का आरोहण नहीं करता तब तक उसको स्वस्थान अप्रमत्त अथवा निरतिशय अप्रमत्त कहते हैं ॥46॥

www.JainKosh.org

7वां गुणस्थान

स्वस्थान अप्रमत्त विरत

जिसमें जीव 6 – 7 वे गुणस्थान में गमनागमन करता है

सातिशय अप्रमत्तविरत

जिसमें जीव श्रेणी आरोहण करता है

स्वस्थान और सातिशय अप्रमत्त

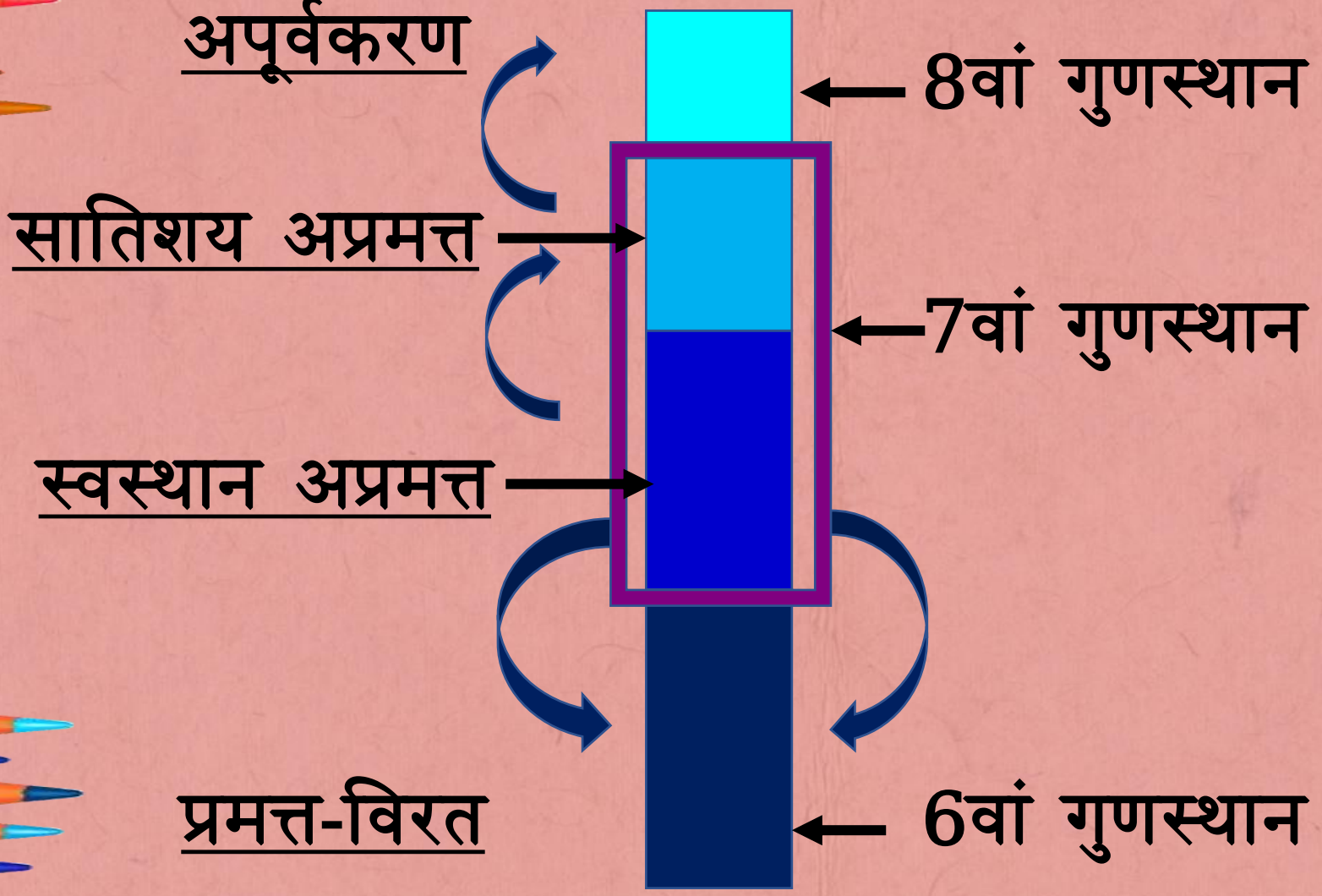

www.JainKosh.org

इगिवीसमोहखवणुव-समणणिमित्ताणि तिकरणाणि तहिं।
पढमं अधापवत्तं, करणं तु करेदि अपमत्तो ॥47॥

- अर्थ - अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन सम्बन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ इस तरह बारह और नव हास्यादिक नोकषाय कुल मिलकर मोहनीय कर्म की इन 21 प्रकृतियों के
- उपशम या क्षय करने को आत्मा के ये तीन करण अर्थात् तीन प्रकार के विशुद्ध परिणाम निमित्तभूत हैं – अध:करण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण।
- उनमें से सातिशय अप्रमत्त अर्थात् जो श्रेणि चढ़ने के लिये सम्मुख या उद्यत हुआ है वह नियम से पहले अध:प्रवृत्तकरण को करता है ॥47॥

www.JainKosh.org

श्रेणी क्या?

- श्रेणी अर्थात् चारित्र मोहनीय की 21 प्रकृतियों के उपशम या क्षय में निमित्तभूत वृद्धिंगत वीतराग परिणाम

उपशम श्रेणी	क्षपक श्रेणी
21 प्रकृतियों का उपशम	21 प्रकृतियों का क्षय
8, 9, 10, 11 गुणस्थान	8, 9, 10, 12 गुणस्थान

क्षायिक सम्यग्दृष्टि मुनिराज उपशम श्रेणी या क्षपक श्रेणी आरोहण कर सकते हैं ।

उपशम सम्यग्दृष्टि मुनिराज उपशम श्रेणी ही आरोहण कर सकते हैं, क्षपक श्रेणी नहीं ।

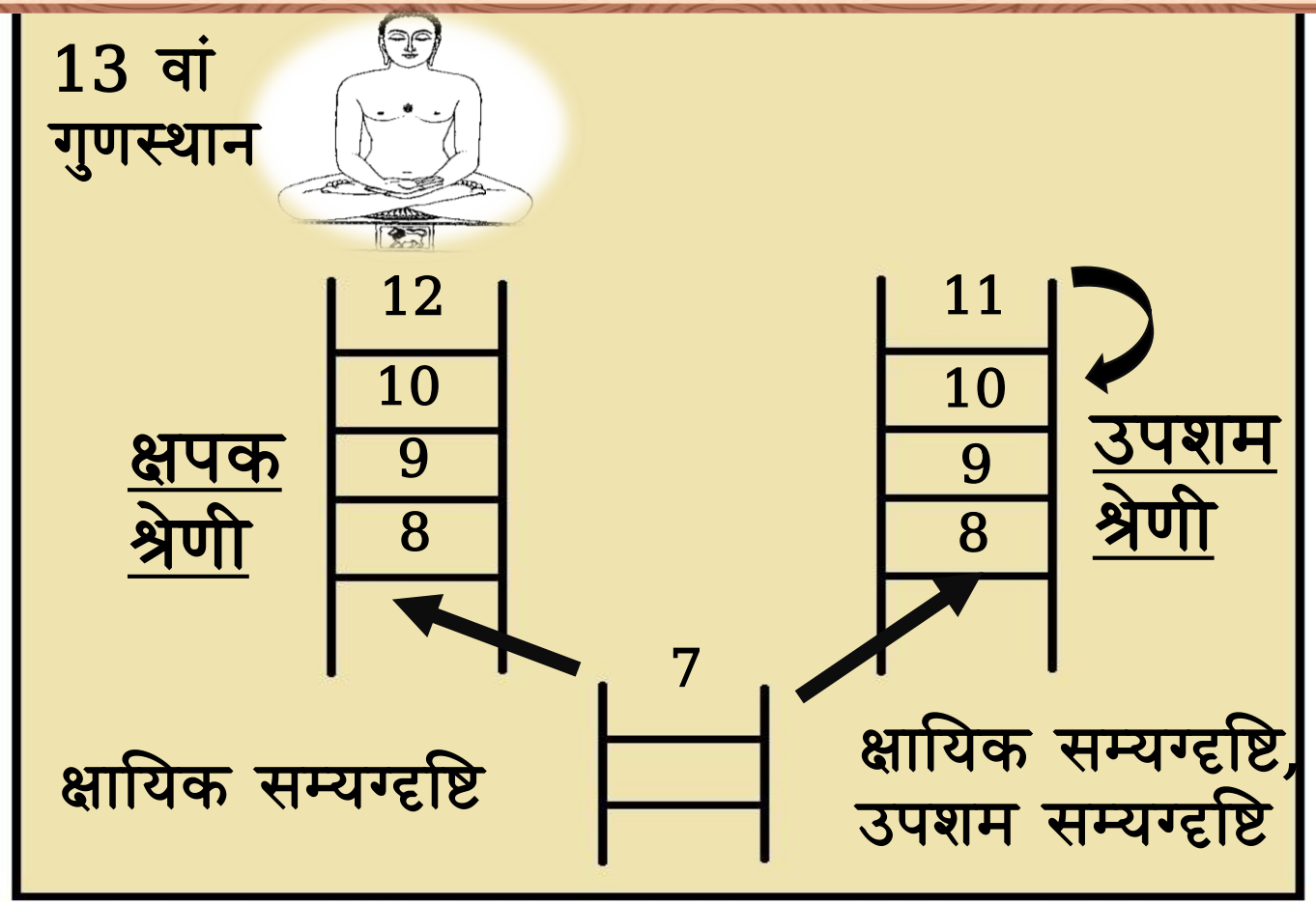

अध: प्रवृत्तकरण प्रारंभ करते हैं।

विश्राम करके

दर्शन मोह का उपशम करें । अथवा दर्शन मोह की क्षपणा करें ।

फिर विश्राम करके

अनंतानुबंधी की विसंयोजना करके

क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी अप्रमत्त-संयत मुनिराज

श्रेणी चढ़ने की विधि

अथवा

क्षायिक सम्यक्त्वी अप्रमत्त मुनिराज

अध:प्रवृत्तकरण करते हैं ।

www.JainKosh.org

प्रथमोपशम सम्यक्त्व

अनन्तानुबन्धी-4 और दर्शन मोह की 1, 2 अथवा 3 प्रकृतियों के उपशम से मिथ्यात्व गुणस्थान से 4, 5 और 7वें गुणस्थान में जो सम्यक्त्व प्राप्त होता है उसे प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहते हैं ।

इसके साथ श्रेणी आरोहण नहीं किया जा सकता है।

द्वितीयोपशम सम्यक्त्व

उपशम श्रेणी चढ़ने के सन्मुख अवस्था में क्षायोपशमिक सम्यक्त्व से जो उपशम सम्यक्त्व प्राप्त होता है उसे द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं ।

द्वितीयोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करने की प्रक्रिया स्वस्थान अप्रमत्त में होती है ।

इस जीव को अनंतानुबन्धी की विसंयोजना रहती है ।

www.JainKo

जह्मा उवरिमभावा, हेट्ठिमभावेहिं सरिसगा होंति।
तह्मा पढमं करणं, अधापवत्तो त्ति णिद्दिट्ठं ॥48॥

अर्थ - अध:प्रवृत्तकरण के काल में से ऊपर के समयवर्ती जीवों के परिणाम नीचे के समयवर्ती जीवों के परिणामों के सदृश अर्थात् संख्या और विशुद्धि की अपेक्षा समान होते हैं, इसलिये प्रथम करण को अध:प्रवृत्त करण कहा है ॥48॥

www.JainKosh.org

करण किसे कहते हैं?

जिन परिणाम विशेषों के द्वारा

दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय के

उपशमादिरूप विवक्षित भाव उत्पन्न किए जाते हैं

उन परिणामों को करण कहते हैं।

तीन करण

अधःप्रवृत्तकरण	• जहाँ भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम समान भी हो सकते हैं और भिन्न भी हो सकते हैं ।
अपूर्वकरण	• जहाँ भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम भिन्न ही होते हैं ।
अनिवृत्तिकरण	• जहाँ समान समयवर्ती जीवों के परिणाम समान ही होते हैं ।

www.JainKosh.org

तीन करण एक जीव की अपेक्षा हैं या नाना जीवों की अपेक्षा?

नाना जीवों की अपेक्षा

www.JainKosh.org

अंतोमुहुत्तमेत्तो, तक्कालो होदि तत्थ परिणामा।
लोगाणमसंखमिदा, उवरुवरिं सरिसवड्ढिगया ॥49॥

- अर्थ - इस अध:प्रवृत्तकरण का काल अन्तर्मुहूर्त मात्र है,
- उसमें परिणाम असंख्यातलोक प्रमाण होते हैं और
- ये परिणाम ऊपर-ऊपर सदृश वृद्धि को प्राप्त होते गये हैं ॥49॥

www.JainKosh.org

आवश्यक सूत्र

$$\frac{\text{सर्वधन}}{\text{गच्छ}^2 \times \text{संख्यात}} = \text{चय}$$

$$\frac{\text{गच्छ} - 1}{2} \times \text{चय} \times \text{गच्छ} = \text{चयधन}$$

$$\text{सर्वधन} - \text{चयधन} = \text{आदिधन}$$

$$\frac{\text{आदिधन}}{\text{गच्छ}} = \text{आदि}$$

सर्वधन = 3072, गच्छ = 16, संख्यात = 3

चय	$\frac{\text{सर्वधन}}{\text{गच्छ}^2 \times \text{संख्यात}}$	$\frac{3072}{16 \times 16 \times 3} = 4$
चयधन	$\frac{\text{गच्छ} - 1}{2} \times \text{चय} \times \text{गच्छ}$	$\frac{16 - 1}{2} \times 4 \times 16$ $= 15 \times 2 \times 16 = 480$
आदिधन	सर्वधन – चयधन	$3072 - 480 = 2592$
आदि	$\frac{\text{आदिधन}}{\text{गच्छ}}$	$\frac{2592}{16} = 162$

16	222
15	218
14	214
13	210
12	206
11	202
10	198
9	194
8	190
7	186
6	182
5	178
4	174
3	170
2	166
1	162
समय	परिणामों की संख्या

अध:प्रवृत्त करण के परिणामों की रचना

(अंक संदृष्टि से)

कुल परिणाम = 3072

समय = 16

चय = 4

www.JainKosh.org

16	162 + (4 × 15)
15	162 + (4 × 14)
14	162 + (4 × 13)
13	162 + (4 × 12)
12	162 + (4 × 11)
11	162 + (4 × 10)
10	162 + (4 × 9)
9	162 + (4 × 8)
8	162 + (4 × 7)
7	162 + (4 × 6)
6	162 + (4 × 5)
5	162 + 4 + 4 + 4 + 4
4	162 + 4 + 4 + 4
3	162 + 4 + 4
2	162 + 4
1	162
समय	परिणामों की संख्या

चयधन का तात्पर्य

आदि (162) से अधिक जो द्रव्य ऊपर-ऊपर अधिक दिया है, उसका जोड़ चयधन है ।

rg

अनुकृष्टि रचना

अनुकृष्टि गच्छ	$= \frac{\text{ऊर्ध्व गच्छ}}{\text{संख्यात}} = \frac{16}{4} = 4$
अनुकृष्टि चय	$= \frac{\text{ऊर्ध्व चय}}{\text{अनुकृष्टि गच्छ}} = \frac{4}{4} = 1$
सर्वधन = 162, गच्छ = 4, चय = 1	
चयधन	$= \frac{4 - 1}{2} \times 1 \times 4 = 3 \times 1 \times 2 = 6$
आदिधन	$= 162 - 6 = 156$
आदि	$= \frac{156}{4} = 39$

- तो प्रथम समय संबंधी रचना ऐसे बनेगी ।

162 ➔	39	40	41	42

- ऐसे ही द्वितीय समय संबंधी रचना बनाइये ।

166 ➔	40	41	42	43

- ऐसे ही सारे समयों में बनाइये ।

16	222	54	55	56	57
15	218	53	54	55	56
14	214	52	53	54	55
13	210	51	52	53	54
12	206	50	51	52	53
11	202	49	50	51	52
10	198	48	49	50	51
9	194	47	48	49	50
8	190	46	47	48	49
7	186	45	46	47	48
6	182	44	45	46	47
5	178	43	44	45	46
4	174	42	43	44	45
3	170	41	42	43	44
2	166	40	41	42	43
1	162	39	40	41	42
समय	परिणामों की संख्या	अनुकृष्टि के खंड			

अध:प्रवृत्त करण के सर्व समयों की अनुकृष्टि रचना

अनुकृष्टि रचना

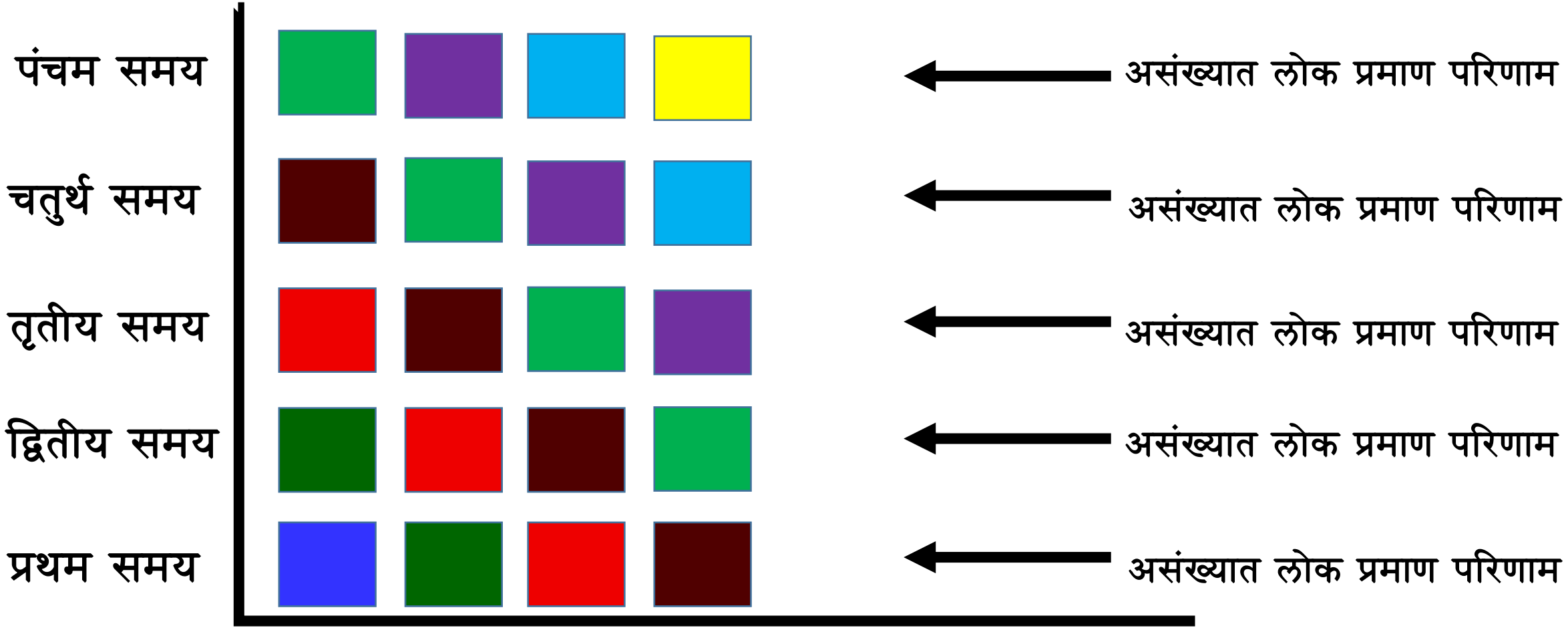

काल - अंतर्मुहूर्त

असंख्यात लोक प्रमाण और लोक प्रमाण असंख्यात में अंतर

लोक प्रमाण असंख्यात =

- लोकाकाश में जितने प्रदेश हैं वे, i.e. असंख्यात

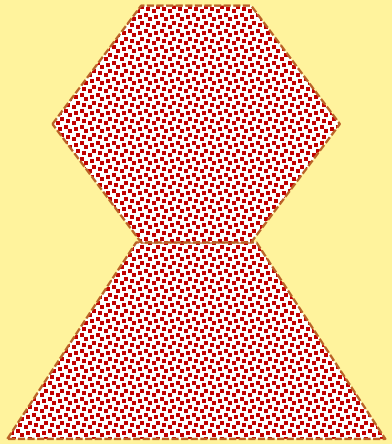

लोक प्रमाण असंख्यात

असंख्यात लोक प्रमाण =

- लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों से असंख्यात गुणा

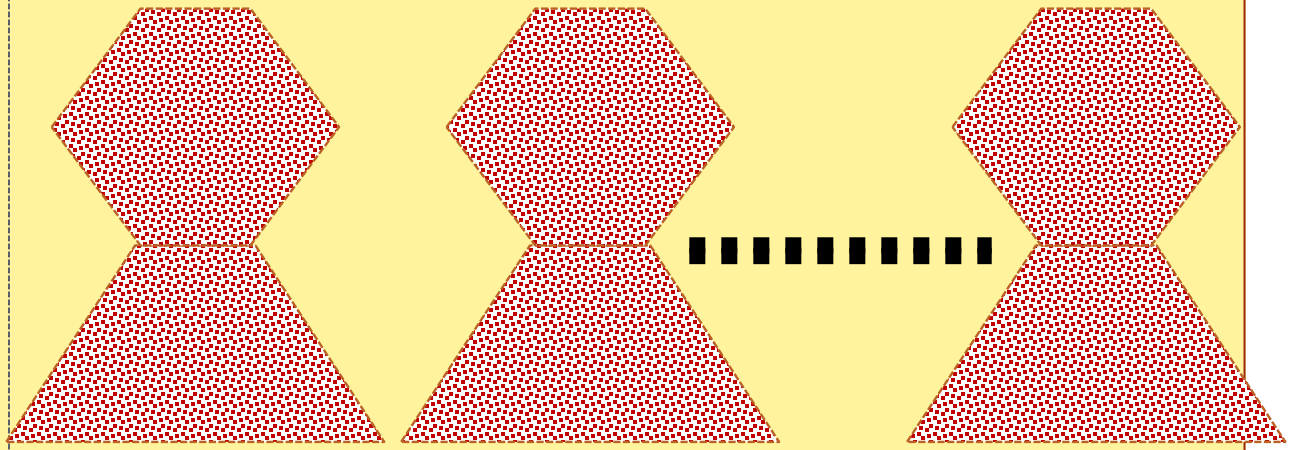

असंख्यात लोक प्रमाण

अध:प्रवृत्त करण के परिणाम

1..2..3....39...40.....79..80.....120..121.....162.....205.....249.....294.....

प्रथम समय परिणाम

40 205

द्वितीय समय परिणाम

80 249

तृतीय समय परिणाम

121 294

चतुर्थ समय परिणाम

अध:प्रवृत्त करण के समयों की अनुकृष्टि रचना

4th समय के परिणाम	• 121 122 .....294 = 174
3rd समय के परिणाम	• 80 81 .....249 =170
2nd समय के परिणाम	• 40 41 .....205 =166
1st समय के परिणाम	• 1 2 3 .....162 = 162

अनुकृष्टि रचना

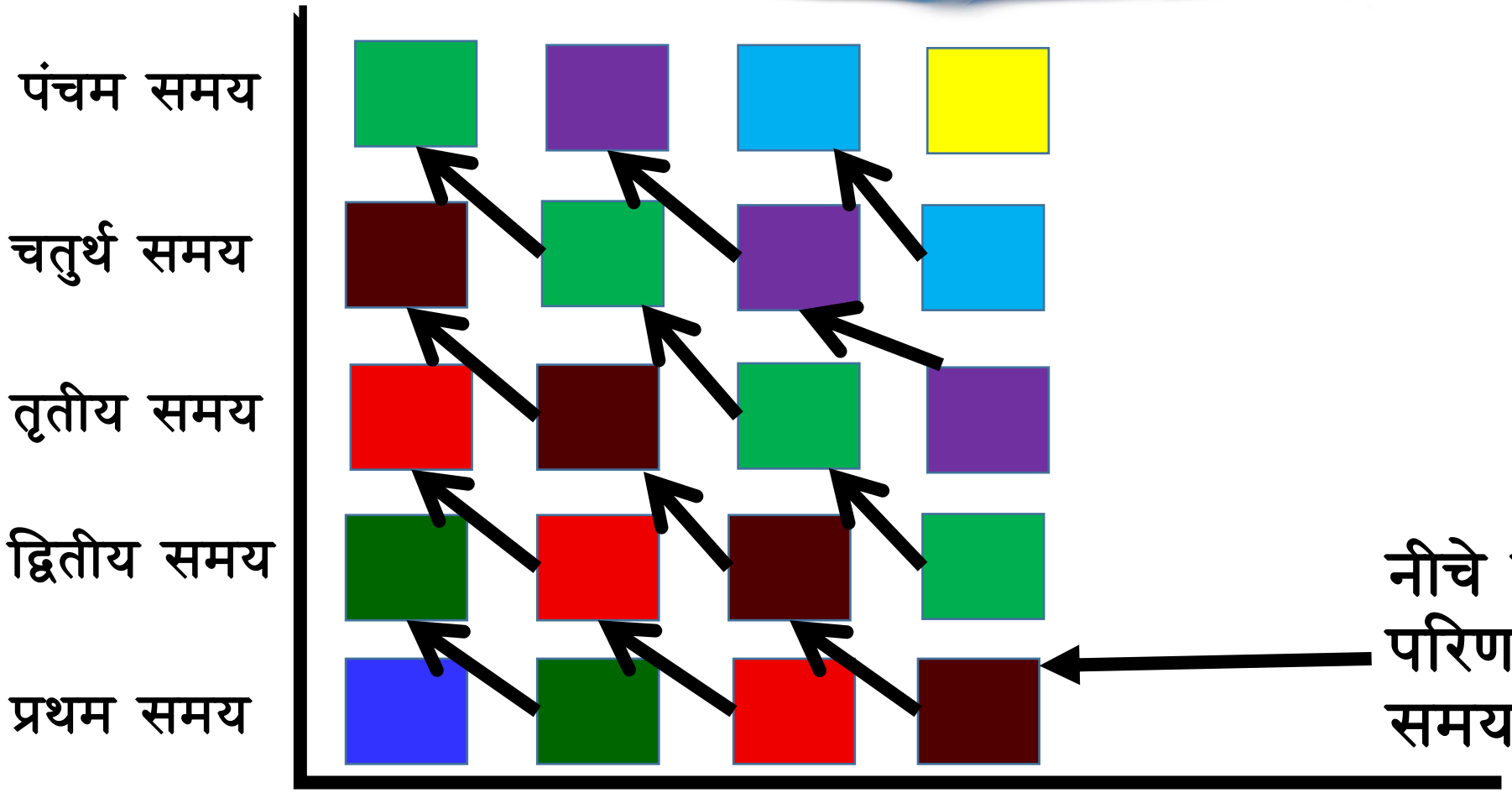

नीचे के समय में स्थित परिणाम-पुंज का ऊपर के समय में पाया जाना

काल - अंतर्मुहूर्त

4	174	42	43	44	45
		(121-162)	(163-205)	(206-249)	(250-294)
3	170	41	42	43	44
		(80-120)	(121-162)	(163-205)	(206-249)
2	166	40	41	42	43
		(40-79)	(80-120)	(121-162)	(163-205)
1	162	39	40	41	42
		(1-39)	(40-79)	(80-120)	(121-162)
समय	परिणामों की संख्या	अनुकृष्टि के खंड			

अनुकृष्टि खंडों के परिणाम

सबसे जघन्य खण्ड व उत्कृष्ट खण्ड सर्वथा असमान हैं ।

एक खंड के जघन्य से उसी खण्ड का उत्कृष्ट परिणाम अनंत गुणी विशुद्धता लिए है ।

एक खंड के उत्कृष्ट से अगले खण्ड का जघन्य परिणाम अनंत गुणी विशुद्धता लिए है ।

वास्तविक संख्याएं

अध:प्रवृत्तकरण का काल अन्तर्मुहूर्त है अर्थात् असंख्यात समय।

कुल परिणामों की संख्या असंख्यात लोक प्रमाण है।

चय का प्रमाण भी असंख्यात लोक है।

एक-एक समय के परिणामों की संख्या भी असंख्यात लोक है।

अनुकृष्टि गच्छ अन्तर्मुहूर्त का संख्यातवा भाग होकर भी असंख्यात है।

अनुकृष्टि चय का प्रमाण भी असंख्यात लोक है।

एक-एक अनुकृष्टि खंड के परिणाम भी असंख्यात लोक हैं।

अधःप्रवृत्तकरण के 4 आवश्यक

प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि बढ़ना

स्थितिबंधापसरण

पाप प्रकृतियों का अनुभाग-बंधापसरण

पुण्य प्रकृतियों का बढ़ता हुआ अनुभाग बंध

www.JainKosh.org

प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि

→जीव में होने वाला एकमात्र आवश्यक

जीव के परिणामों के निमित्त से

शेष 3 आवश्यक कर्मों में होते हैं

वह भी नवीन बंधने वाले कर्मों में

www.JainKosh.org

कर्म की अवस्था

बंध	पुद्गल कर्म का ज्ञानावरणादि रूप परिणमन होकर आत्मा से संबंध होना
उदय	कर्म का स्थिति को प्राप्त होने पर फल देना
सत्ता	उदय न आने तक आत्मा के साथ कर्म अवस्था में एकक्षेत्रावगाह संबंध रहना

www.JainKosh.org

कर्म बंध

- **प्रकृति** — कर्म का स्वभाव
- **प्रदेश** — कर्म परमाणुओं की संख्या
- **स्थिति** — कर्म का आत्मा के साथ रहने का काल
- **अनुभाग** — कर्म के आत्मा को फल देने की शक्ति

योग

कषाय

स्थितिबंधापसरण

बंधने वाले समस्त कर्मों की स्थिति

हर अंतर्मुहूर्त में

घट-घट कर बंधती है,

उसे स्थितिबंधापसरण कहते हैं।

स्थितिबंधापसरण

उदाहरण- स्थिति बंध माना 1000 वर्ष

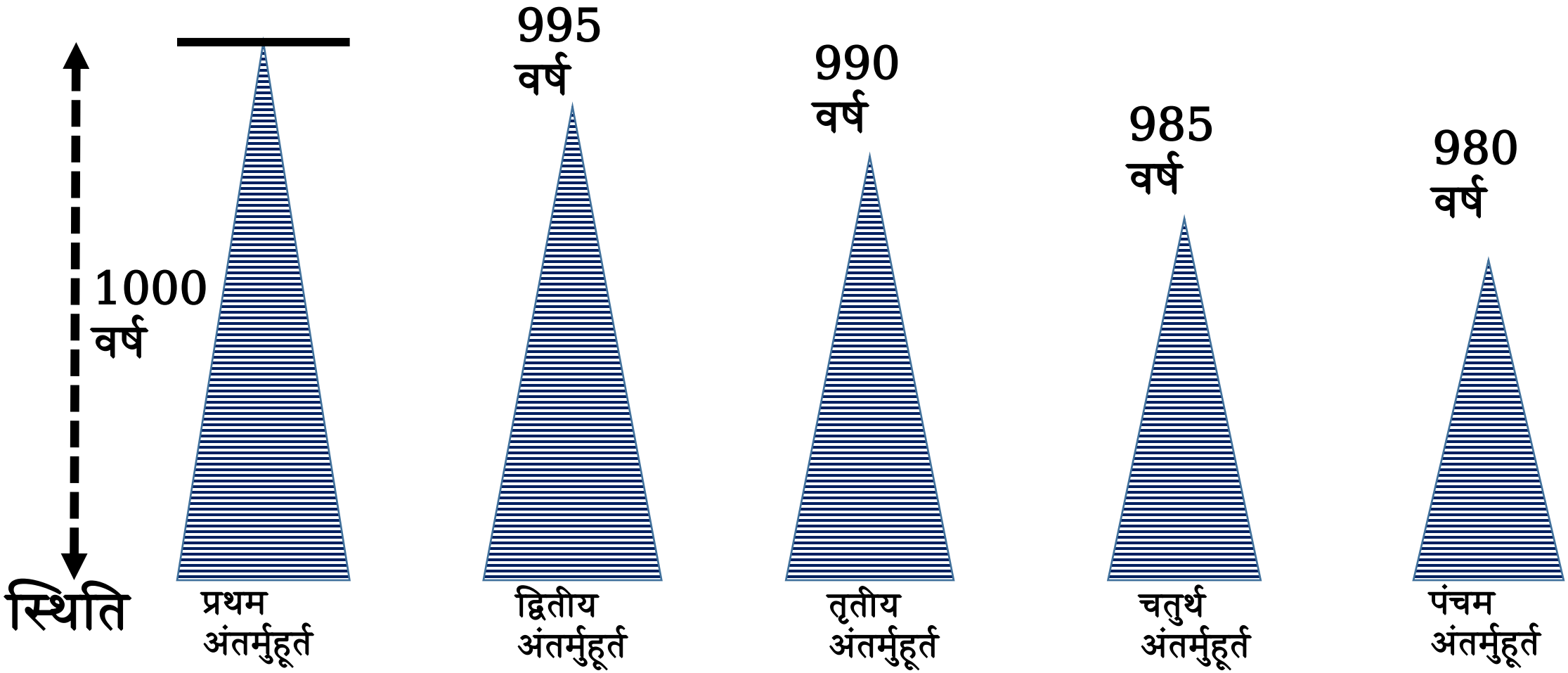

स्थितिबंधापसरण

वास्तविक गणित में यहाँ होने वाला स्थितिबंध अंत:कोड़ाकोडी सागर है ।

हर अंतर्मुहूर्त में घटने वाला बंध $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$ है।

ऐसे स्थितिबंधापसरण अध:प्रवृत्तकरण में हजारों होते हैं ।

अंत:कोड़ाकोड़ी सागर

- कोड़ा कोड़ी अर्थात्= करोड़ x करोड़
- = 1,00,00,000 x 1,00,00,000
- अंत: अर्थात् १ करोड़ सागर से ऊपर और १ कोड़ा कोडी सागर से कम
- १ सागर = 10 कोड़ा कोड़ी पल्य

समस्त कर्मों का स्थिति-बंध क्यों घटता है? सिर्फ पाप प्रकृतियों का क्यों नहीं?

क्योंकि 3 आयु को छोड़कर शेष सभी कर्मों की स्थिति पाप-रूप ही है।

www.JainKosh.org

अनुभागबंधापसरण

बंधने वाले पाप कर्मों का अनुभाग

प्रतिसमय

अनंतगुणा हीन - अनंतगुणा हीन होकर बंधता है ।

यहाँ पाप प्रकृतियों का मात्र द्विस्थानीय बंध होता है ।

घाति कर्मों का चतु:स्थान अनुभाग बंध

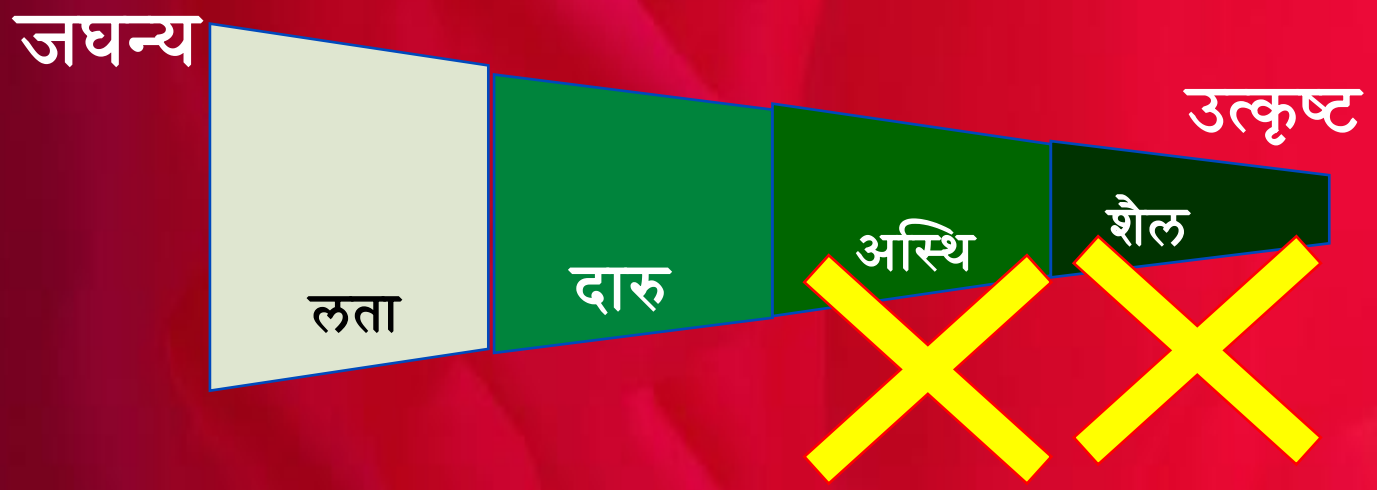

लता
- बेल

दारु
- काष्ठ, लकड़ी

अस्थि
- हड्डी

शैल
- पाषाण, पर्वत

नए बंधने वाले घाति कर्मों में इन दो स्थानों का अनुभाग नहीं बंधता

अघातिया कर्मों का अनुभाग

गुड़ | खाण्ड | शर्करा | अमृत

प्रशस्त प्रकृतियाँ (42)

जैसे गुड़, खाण्ड आदि अधिक-अधिक मिष्ट हैं, वैसे इन प्रशस्त प्रकृतियों के स्पर्धक उत्तरोत्तर मिष्टरूप हैं । अर्थात् अधिक-अधिक सांसारिक सुख के कारण हैं ।

निंब | कांजीर | विष | हलाहल

अप्रशस्त प्रकृतियाँ (37)

जैसे निंब, कांजीर आदि उत्तरोत्तर अधिक-अधिक कड़वे हैं, अधिक-अधिक दु:खद हैं, वैसे इन अप्रशस्त प्रकृतियों के स्पर्धक उत्तरोत्तर अधिक-अधिक कड़वे हैं, अधिक-अधिक दु:ख के कारण हैं ।

घाति कर्म ➔	लता	दारु
पापरूप अघाति कर्म ➔	निम्ब	कांजीर

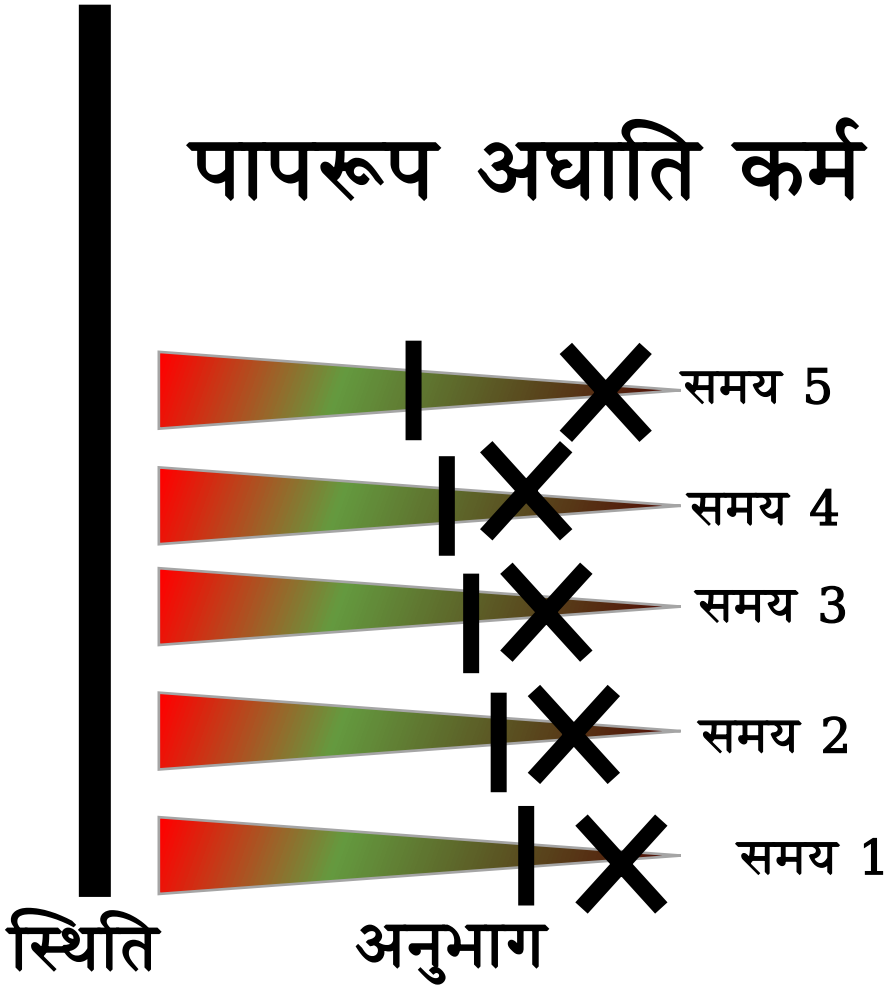

इन दो अनुभाग में भी प्रतिसमय अनंत गुणा हीन-हीन होकर अनुभाग बांधता है

पाप प्रकृतियों का नया अनुभाग बंध

अनुभाग बंध बढ़ना

बंधने वाले पुण्य कर्मों का अनुभाग

प्रतिसमय अनंतगुणा अधिक - अनंतगुणा अधिक बंधता है।

प्रशस्त कर्मों का चतु:स्थानीय बंध होता है।

www.

प्रशस्त अघाति कर्मों का चतु:स्थान अनुभाग बंध

गुड़	खांड	शर्करा	अमृत

नए बंधने वाले अघाति कर्मों में पुण्य प्रकृतियों का चतु:स्थानीय अनुभाग बंध होता है ।

www.JainKosh.org

सभी कर्मों का स्थिति बंध

घटता है

पाप प्रकृतियों का अनुभाग बंध

घटता है

पुण्य प्रकृतियों का अनुभाग बंध

बढ़ता है

www.jainkosha.org

ये चार आवश्यक कब तक होते हैं?

प्रारंभ

- अधःप्रवृत्तकरण के प्रथम समय से

अंत

- जब तक बंध है अर्थात् 10वें के अंत तक

ww

अंतोमुहुत्तकालं, गमिऊण अधापवत्तकरणं तं।
पडिसमयं सुज्झंतो, अपुव्वकरणं समल्लियइ ॥50॥

अर्थ - जिसका अन्तर्मुहूर्त मात्र काल है, ऐसे अध:प्रवृत्तकरण को बिताकर वह सातिशय अप्रमत्त जब प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि को लिए हुए अपूर्वकरण जाति के परिणामों को करता है, तब उसको अपूर्वकरणनामक अष्टमगुणस्थानवर्ती कहते हैं ॥50॥

www.JainKosh.org

एदम्हि गुणट्ठाणे, विसरिससमयट्ठियेहिं जीवेहिं।
पुव्वमपत्ता जह्मा, होंति अपुव्वा हु परिणामा ॥51॥

अर्थ - इस गुणस्थान में भिन्नसमयवर्ती जीव, जो पूर्व समय में कभी भी प्राप्त नहीं हुए थे ऐसे अपूर्व परिणामों को ही धारण करते हैं, इसलिये इस गुणस्थान का नाम अपूर्वकरण है ॥51॥

www.JainKosh.org

भिण्णसमयट्ठियेहिं दु, जीवेहि ण होदि सव्वदा सरिसो।
करणेहिं एक्कसमयट्ठियेहिं सरिसो विसरिसो वा ॥52॥

अर्थ - यहाँ पर (अपूर्वकरण में) भिन्न समयवर्ती जीवों में विशुद्ध परिणामों की अपेक्षा कभी भी सादृश्य नहीं पाया जाता; किन्तु एक समयवर्ती जीवों में सादृश्य और विसादृश्य दोनों ही पाये जाते हैं ॥52॥

www.JainKosh.org

स्वरूप - अपूर्वकरण

भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम

भिन्न ही

एक समयवर्ती जीवों के परिणाम

भिन्न भी

समान भी

inKos

अपूर्वकरण गुणस्थान

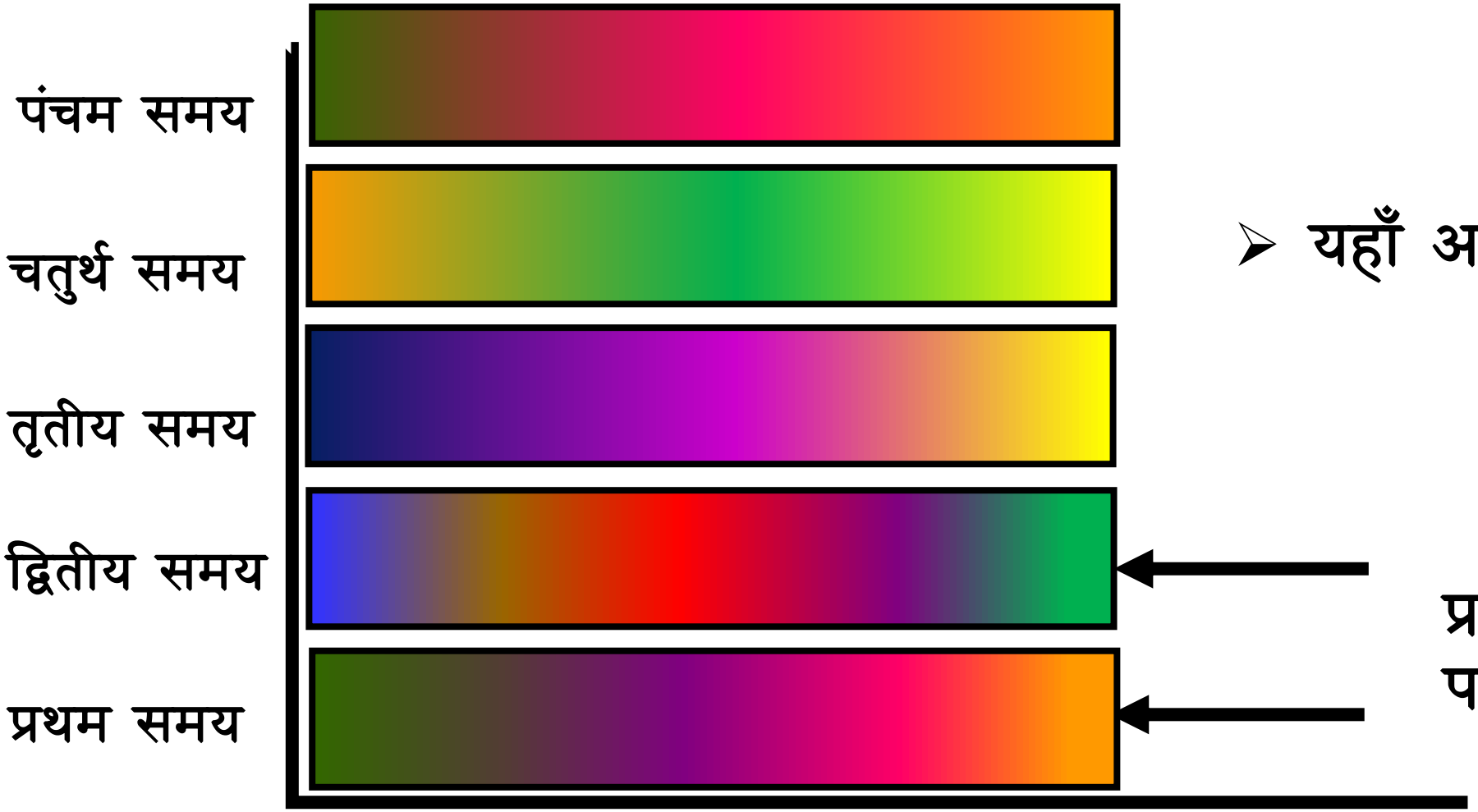

➢ यहाँ अनुकृष्टि रचना नहीं है ।

प्रतिसमय अपूर्व-अपूर्व परिणाम

काल - अंतर्मुहूर्त

असंख्यात लोक प्रमाण परिणाम

सर्वधन = 4096, गच्छ = 8, संख्यात = 4

पद	सूत्र	उदाहरण
चय	$\frac{\text{सर्वधन}}{\text{गच्छ}^2 \times \text{संख्यात}}$	$\frac{4096}{8 \times 8 \times 4} = 16$
चयधन	$\frac{\text{गच्छ} - 1}{2} \times \text{चय} \times \text{गच्छ}$	$\frac{8 - 1}{2} \times 16 \times 8$ $= 7 \times 8 \times 8 = 448$
आदिधन	सर्वधन – चयधन	$4096 - 448 = 3648$
आदि	$\frac{\text{आदिधन}}{\text{गच्छ}}$	$\frac{3648}{8} = 456$

अपूर्वकरण के परिणामों की रचना (अंक संदृष्टि से)

8	568 (3529-4096)
7	552 (2977-3528)
6	536 (2441-2976)
5	520 (1921-2440)
4	504 (1417-1920)
3	488 (929-1416)
2	472 (457-928)
1	456 (1-456)
समय	परिणामों की संख्या

कुल परिणाम = 4096

समय = 8

चय = 16

www.JainKosh.org

अंतोमुहुत्तमेत्ते, पडिसमयमसंखलोगपरिणामा ।
कमउड्ढा पुव्वगुणे, अणुकट्टी णत्थि णियमेण ॥53॥

- अर्थ - इस गुणस्थान का काल अन्तर्मुहूर्त मात्र है,
- इसमें परिणाम असंख्यात लोकप्रमाण होते हैं, और
- वे परिणाम उत्तरोत्तर प्रतिसमय समानवृद्धि को लिये हुए हैं।
- इस गुणस्थान में नियम से अनुकृष्टि रचना नहीं होती है ॥53॥

www.JainKosh.org

वास्तविक संख्याएं

अपूर्वकरण का काल अन्तर्मुहूर्त है अर्थात् असंख्यात समय ।

कुल परिणामों की संख्या असंख्यात लोक प्रमाण है ।

चय का प्रमाण भी असंख्यात लोक है ।

एक-एक समय के परिणामों की संख्या भी असंख्यात लोक है ।

परिणामों की विशुद्धि

अपूर्वकरण के पहले समय का जघन्य परिणाम अध:प्रवृत्त करण के अन्तिम सर्वविशुद्ध परिणाम से भी अनन्तगुणा विशुद्ध है ।

प्रत्येक समय के जघन्य परिणाम से उसी समय का उत्कृष्ट परिणाम अनंत गुणी विशुद्धता लिए है ।

एक समय के उत्कृष्ट परिणाम से अगले समय का जघन्य परिणाम भी अनंत गुणी विशुद्धता लिए है ।

अपूर्वकरण के 4 आवश्यक

गुणश्रेणी निर्जरा	गुण-संक्रमण	स्थिति-कांडक घात	अनुभाग-कांडक घात

ये सब कार्य सत्ता के कर्मों में होते हैं।

www.JainKosh.org

गुणश्रेणी निर्जरा

सत्ता में स्थित कर्मों की

प्रतिसमय

असंख्यात गुणाकार रूप से

निर्जरा होना

गुणश्रेणी निर्जरा कहलाता है ।

गुणश्रेणी का उदाहरण

- मानाकि अपकृष्ट द्रव्य = 8500, गुणश्रेणी आयाम = 4

	निषेक द्रव्य
चतुर्थ निषेक में दिया द्रव्य	6400
तृतीय निषेक में दिया द्रव्य	1600
द्वितीय निषेक में दिया द्रव्य	400
प्रथम निषेक में दिया द्रव्य	100
	8500

- शलाकाओं का जोड़
- 1+4+16+64 =85
- 8500/85 = 100 गुणकार का प्रमाण
- 1x100 = 100,
- 4 x 100 = 400
- 16 x 100 = 1600
- 64 x 100 = 6400

www.JainKosh.org

गुणश्रेणी निर्जरा

उदाहरण

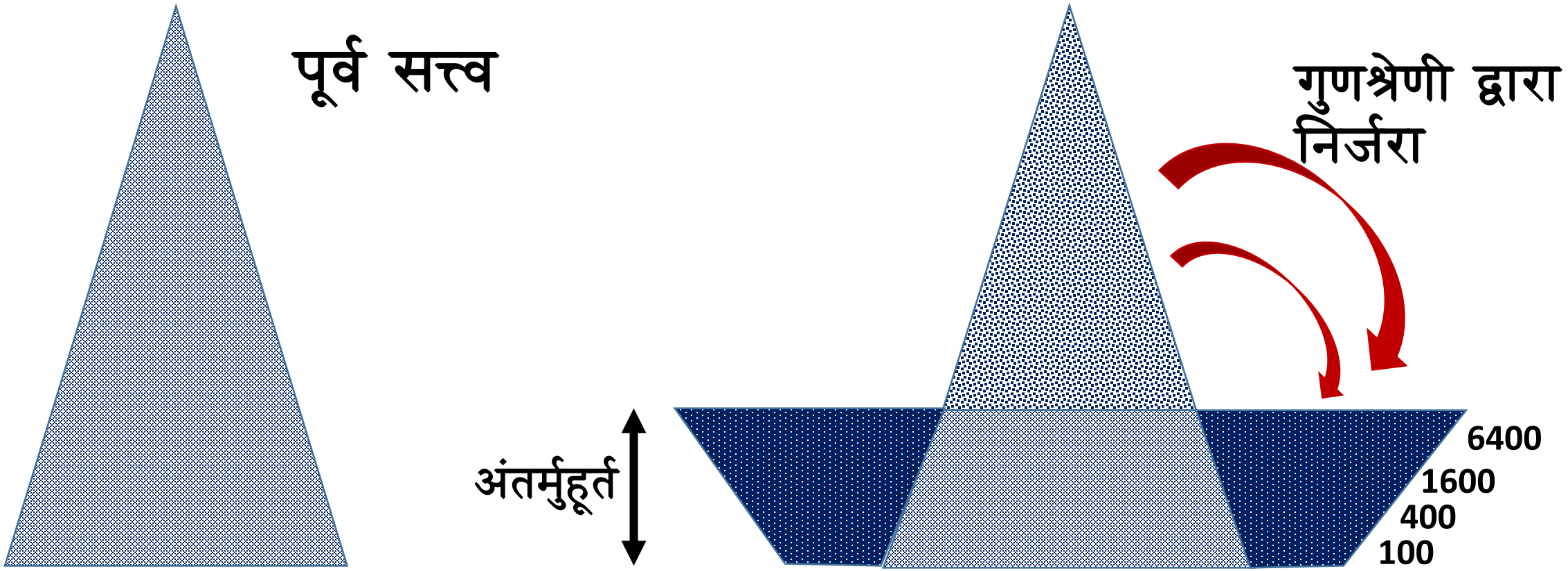

गुणश्रेणी निर्जरा – विशेष

आयु की गुणश्रेणी निर्जरा नहीं होती है ।

शेष सभी पुण्य-पाप रूप प्रकृतियों की गुणश्रेणी निर्जरा होती है ।

इससे कर्म का स्थिति-सत्त्व नहीं घटता है ।

गुणश्रेणी का आयाम (अपूर्वकरण+अनिवृत्तिकरण+सूक्ष्म साम्पराय+कुछ अधिक) जितना होता है।

गुण-संक्रमण

जिनका बंध नहीं हो रहा, सत्ता में स्थित ऐसी पाप प्रकृतियों का

प्रतिसमय

असंख्यात गुणा

वर्तमान में बंधने वाली अन्य प्रकृति रूप होना

गुण-संक्रमण कहलाता है ।

गुण संक्रमण

एक कर्म का अन्य कर्मरूप होना

किन कर्मों का ?

अप्रशस्त कर्मों का

बंधने वालों का ?

नहीं, सत्ता के कर्मों का

कब ?

प्रतिसमय

कितना ?

पहले समय से अगले समय असंख्यातगुणा

संक्रमण के सामान्य नियम

मूल प्रकृतियों में परस्पर संक्रमण नहीं होता है।

चारों आयुओं का आपस में संक्रमण नहीं होता है।

मोहनीय के उत्तर भेद – दर्शन मोहनीय और चारित्र मोहनीय का आपस में संक्रमण नहीं होता है।

दर्शन मोहनीय का दर्शन मोहनीय में और चारित्र मोहनीय का चारित्र मोहनीय के भेदों में आपस में संक्रमण हो सकता है।

स्थिति कांडक घात

सत्ता में स्थित

समस्त कर्मों की कुछ स्थिति

हर अंतर्मुहूर्त में नष्ट करना

स्थितिकांडक घात कहलाता है ।

www.JainKosh.org

स्थितिकांडक घात कैसे होता है ?

जितनी स्थिति नाश करनी है, अग्र भाग के उतने स्थिति के निषेकों को नीचे की स्थिति में दिया जाता है ।

एक अंतर्मुहूर्त में सारे निषेकों को नीचे देकर ऊपर की स्थिति समाप्त हो जाती है ।

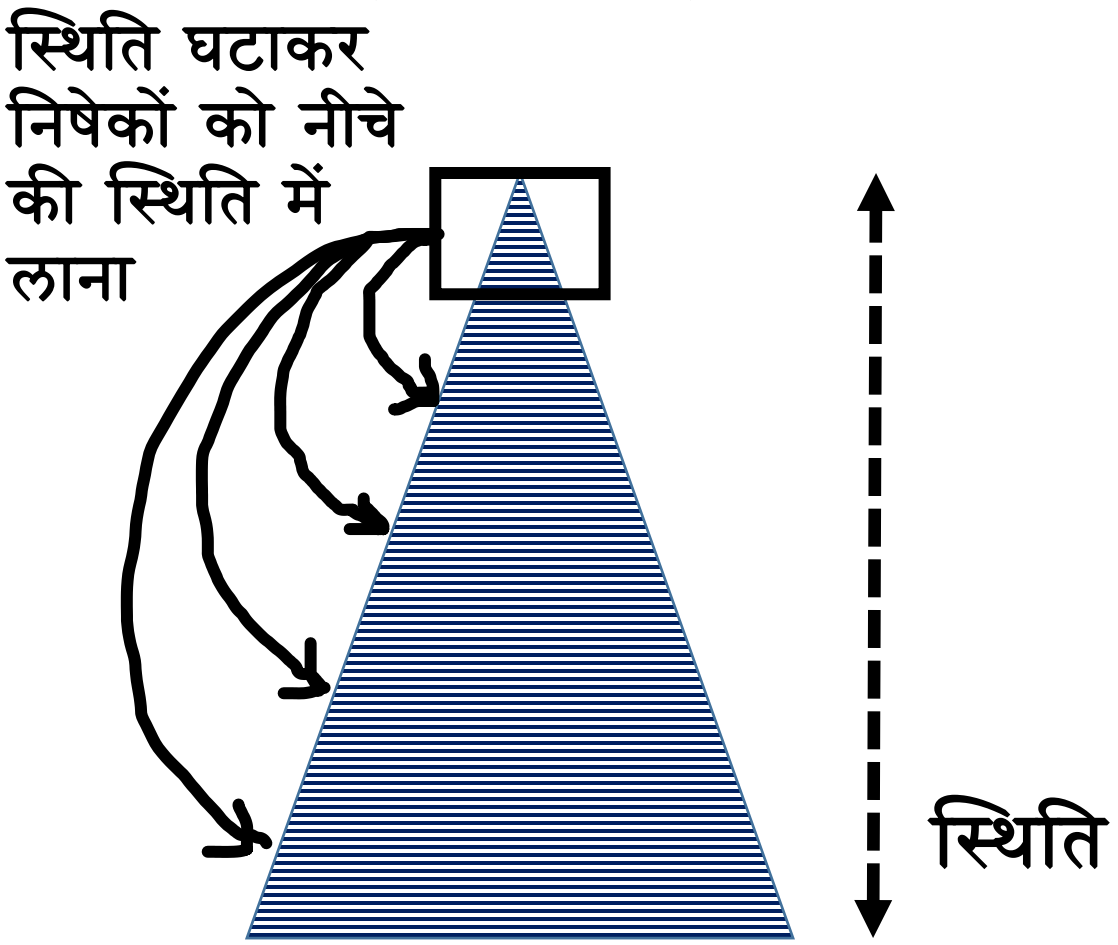

स्थिति काण्डकघात

उदाहरण- स्थिति सत्त्व माना 10000 वर्ष

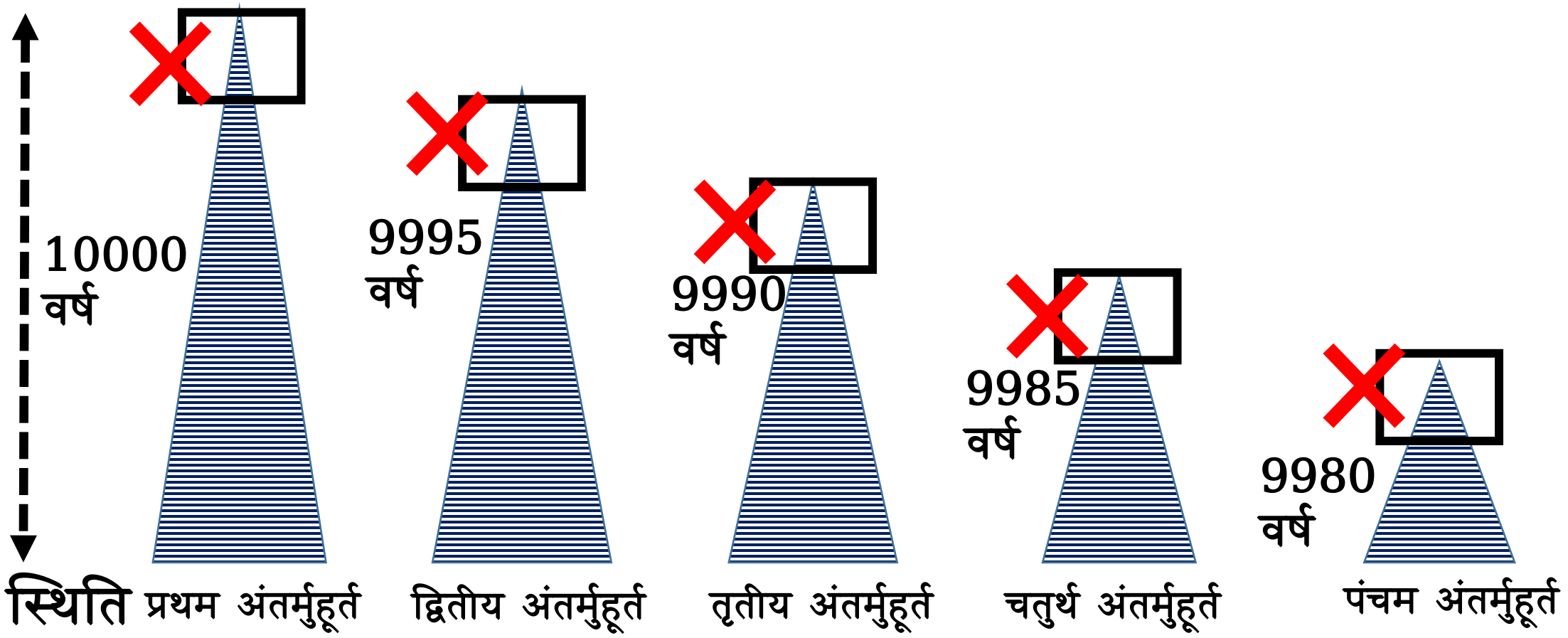

स्थिति काण्डकघात – विशेष

एक स्थितिखण्डन में अन्तर्मुहूर्त काल लगता है ।

आयु को छोड़कर शेष सारे कर्मों की स्थिति का खण्डन (घात) किया जाता है ।

एक करण में संख्यात हजार बार स्थितिकांडक घात होते हैं ।

ऐसे स्थितिकांडक घात के द्वारा स्थिति-सत्त्व करण के प्रारंभ से अंत में संख्यात गुणा कम हो जाता है ।

अनुभागकांडक घात

सत्ता में स्थित

पाप प्रकृतियों का अनुभाग

हर अंतर्मुहूर्त में

अनंत बहुभाग नष्ट करना

अनुभागकांडक घात कहलाता है ।

अनुभागकांडक घात कैसे होता है ?

जितने अनुभाग का नाश करना है, अग्र भाग के उतने अनुभाग के स्पर्धकों को हीन अनुभाग के स्पर्धकों में दिया जाता है ।

एक अंतर्मुहूर्त में सारे स्पर्धकों को हीन अनुभाग में देने पर अधिक शक्ति वाले स्पर्धक समाप्त हो जाते हैं ।

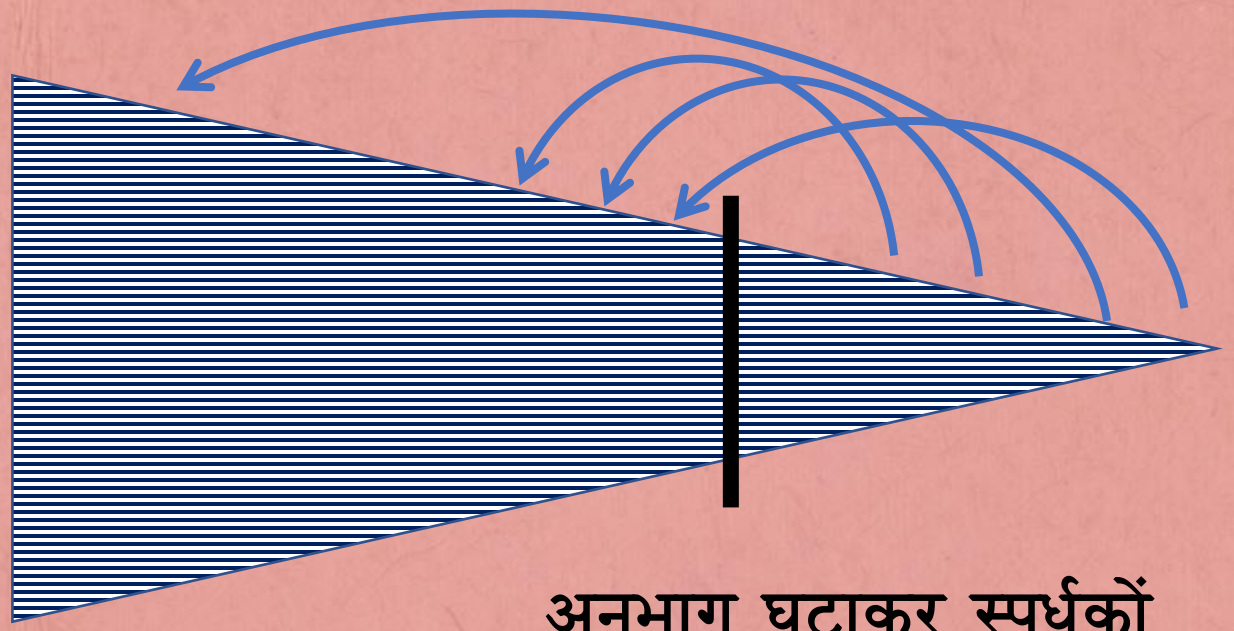

अनुभाग घटाकर स्पर्धकों को हीन शक्ति वाले स्पर्धकों में लाना

www.JainKosh.org

अनुभाग-काण्डक-घात

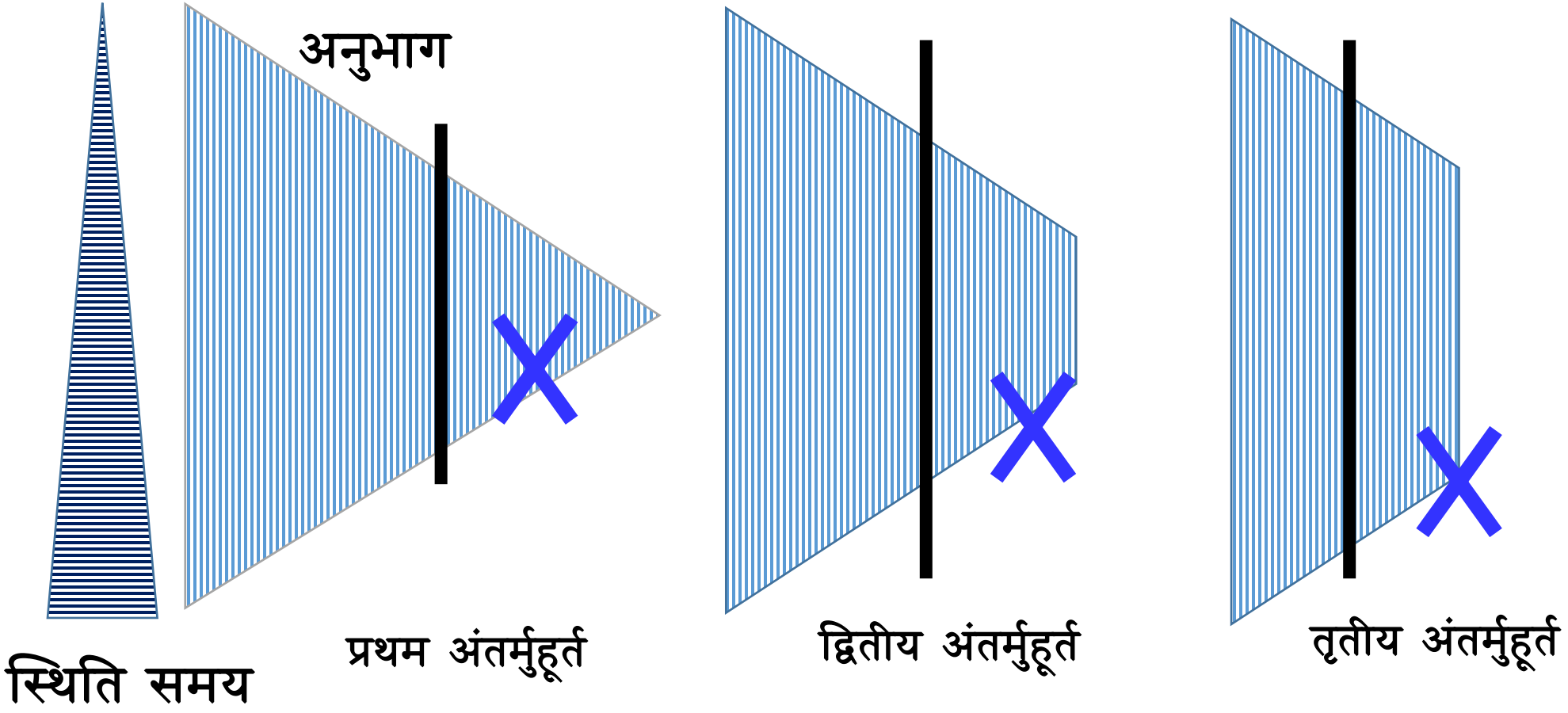

अनुभाग-काण्डक-घात - विशेष

एक अनुभाग खण्डन में अन्तर्मुहूर्त काल लगता है ।

सत्ता के सर्व अप्रशस्त कर्मों का अनुभाग घात होता है ।

पुण्य प्रकृतियों का अनुभाग नहीं घटता है ।

एक स्थितिकाण्डक घात में हजारों अनुभाग-काण्डक घात हो जाते हैं ।

www.JainKosh.org

अपूर्वकरण के आवश्यक - उपसंहार

गुणश्रेणी निर्जरा
- प्रदेशों की
- क्षेत्र

गुण संक्रमण
- प्रकृति का
- द्रव्य

स्थिति खंडन
- स्थिति का
- काल

अनुभाग खंडन
- अनुभाग का
- भाव

ये चार आवश्यक कब तक होते हैं?

प्रारंभ

- अपूर्वकरण के प्रथम समय से

अंत

- मोहनीय के 10वे गुणस्थान तक
- शेष 6 कर्मों के 12वे गुणस्थान तक

तारिसपरिणामट्ठिय-जीवा हु जिणेहिं गलियतिमिरेहिं।
मोहस्सपुव्वकरणा, खवणुवसमणुज्जया भणिया ॥54॥

अर्थ - अज्ञान अन्धकार से सर्वथा रहित जिनेन्द्रदेव ने कहा है कि उक्त परिणामों को धारण करने वाले अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीव मोहनीयकर्म की शेष प्रकृतियों का क्षपण अथवा उपशमन करने में उद्यत होते हैं ॥54॥

www.JainKosh.org

णिद्दापयले णट्ठे, सदि आऊ उवसमंति उवसमया।
खवयं ढुक्के खवया, णियमेण खवंति मोहं तु ॥55॥

अर्थ - जिनके निद्रा और प्रचला की बंध-व्युच्छित्ति हो चुकी है तथा जिनका आयुकर्म अभी विद्यमान है, ऐसे उपशमश्रेणी का आरोहण करने वाले जीव शेष मोहनीय का उपशमन करते हैं और जो क्षपकश्रेणी का आरोहण करने वाले क्षपक हैं, वे नियम से मोहनीय का क्षपण करते हैं ॥55॥

www.JainKosh.org

श्रेणी में मरण सम्बन्धी नियम

उपशम श्रेणी

अपूर्वकरण के प्रथम भाग में मरण नहीं

शेष काल में मरण संभव है

क्षपक श्रेणी

सर्वत्र मरण संभव नहीं

www.JainKosh.org

एकम्मि कालसमये, संठाणादीहिं जह णिवट्टंति।
ण णिवट्टंति तहावि य, परिणामेहिं मिहो जेहिं ॥56॥
होंति अणियट्टिणो ते, पडिसमयं जेस्सिमेक्कपरिणामा।
विमलयरझाणहुयवह-सिहाहिं णिद्दड्ढ कम्मवणा ॥57॥

अर्थ - अन्तर्मुहूर्तमात्र अनिवृत्तिकरण के काल में से आदि या मध्य या अन्त के एक समयवर्ती अनेक जीवों में जिसप्रकार शरीर की अवगाहना आदि बाह्य करणों से तथा ज्ञानावरणादिक कर्म के क्षयोपशमादि अन्तरंग कारणों से परस्पर में भेद पाया जाता है, उसप्रकार जिन परिणामों के निमित्त से परस्पर में भेद नहीं पाया जाता उनको अनिवृत्तिकरण कहते हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थान का जितना काल है, उतने ही उसके परिणाम हैं इसलिये उसके काल के प्रत्येक समय में अनिवृत्तिकरण का एक ही परिणाम होता है तथा

ये परिणाम अत्यन्त निर्मल ध्यानरूप अग्नि की शिखाओं की सहायता से कर्मवन को भस्म कर देते हैं ॥56-57॥

www.JainKosh.org

अनिवृत्तिकरण गुणस्थान

अ + निवृत्ति + करण

विद्यमान नहीं है + भेद + विशुद्ध परिणामों में

वह अनिवृत्तिकरण है ।

www.JainKosh.org

अनिवृत्तिकरण गुणस्थान – विशेष

शरीर का संस्थान, वर्ण, वय तथा उपयोगादि में भेद संभव है ।

यहाँ प्रत्येक समय सभी जीवों के एक जैसा, एक ही परिणाम संभव है ।

इसका काल अन्तर्मुहूर्त है ।

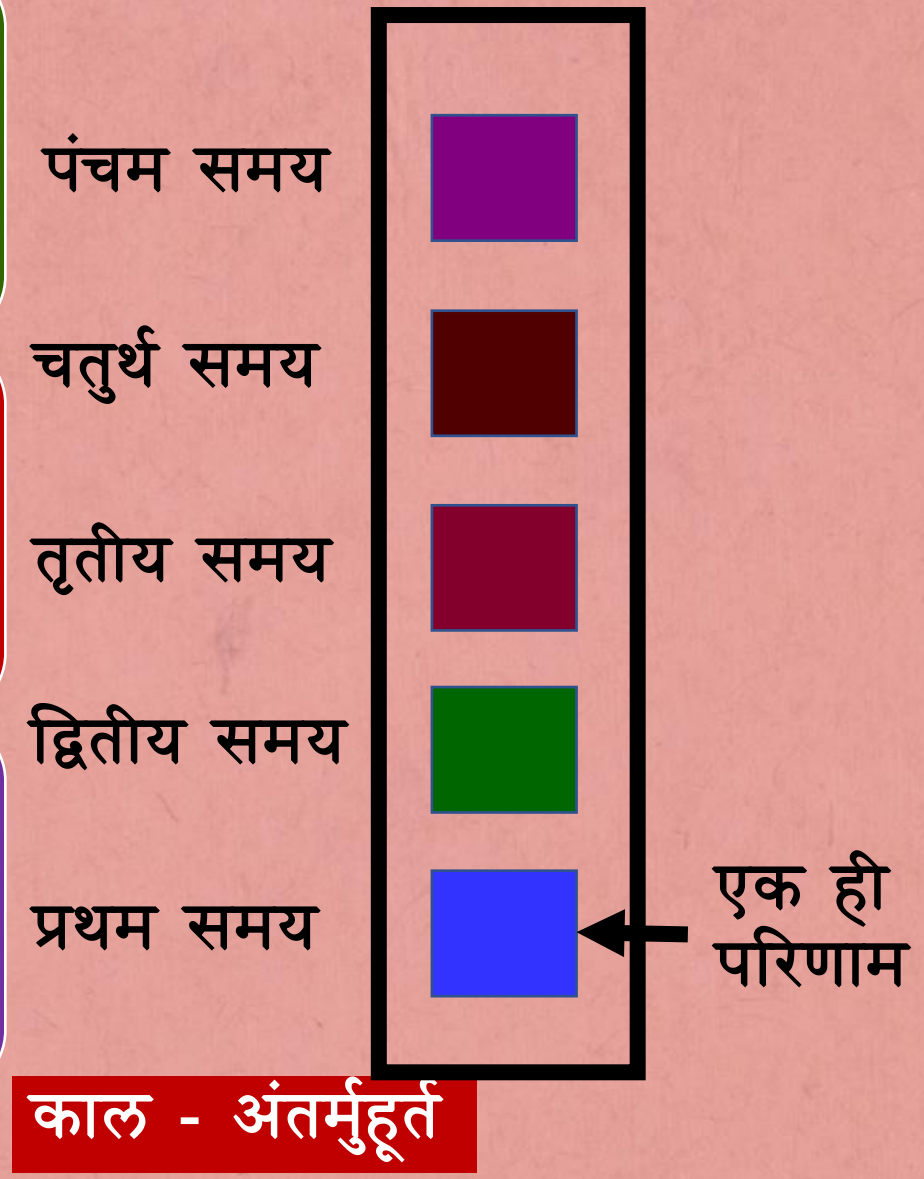

अप्रत्याख्यानावरण 4 प्रत्याख्यानावरण 4	संज्वलन 3	संज्वलन 1
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
x	x	0

उपशम श्रेणी में अंतरकरण के बाद

अप्रत्याख्यानावरण 4 प्रत्याख्यानावरण 4	संज्वलन 3	संज्वलन 1
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
0	0	0
X	X	X
X	X	X
X	X	X
X	X	X
X	X	X
X	X	X
X	X	X
X	X	X
X	X	X
X	X	X
X	X	X
X	X	X
X	X	X
X	X	X
X	X	0
X	X	0
X	X	0
X	X	0
X	X	0

www.JainKosh.org

क्षपक श्रेणी

प्रारंभ के अंतर्मुहूर्त में

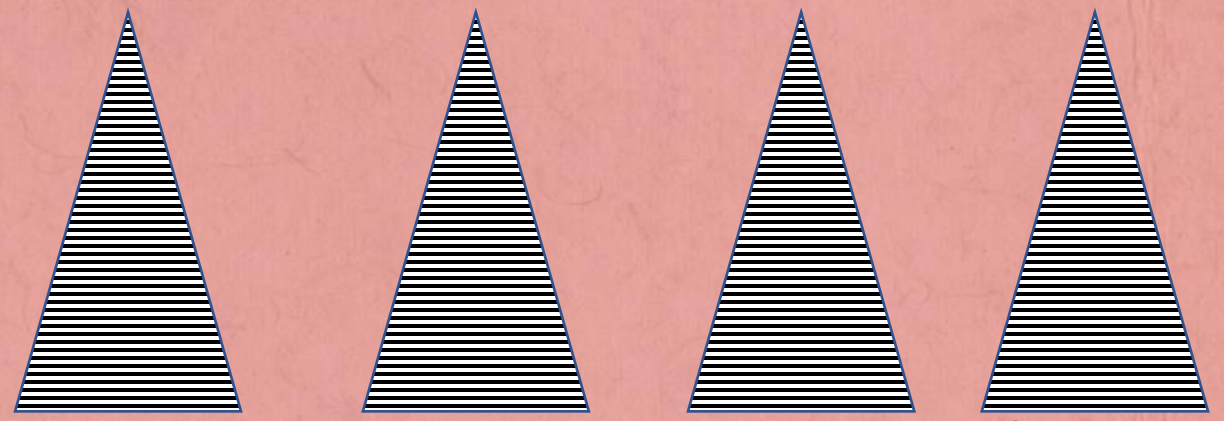

अप्रत्याख्यानावरण 4 प्रत्याख्यानावरण 4 संज्वलन 4 नोकषाय 9

नोकषायों का क्षय होने पर

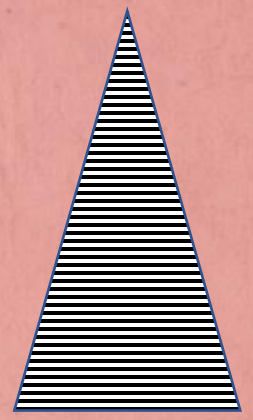

संज्वलन 4

8 कषायों का क्षय होने पर

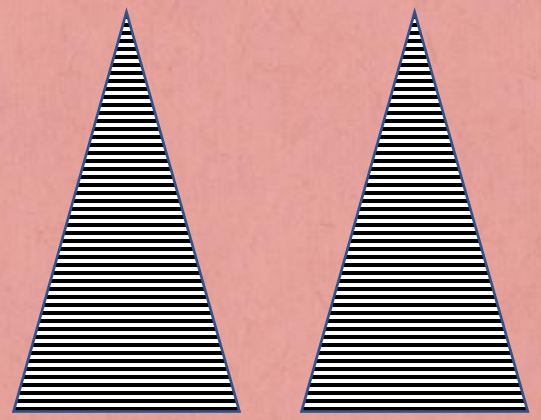

संज्वलन 4 नोकषाय 9

3 संज्वलन का क्षय होने पर

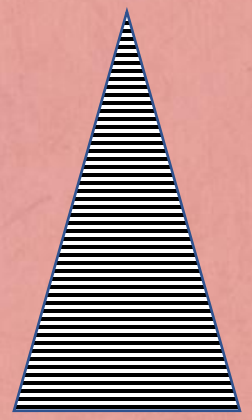

संज्वलन लोभ

www.JainKosh.org

अनिवृत्तिकरण के आवश्यक

उपशम श्रेणी में	क्षपक श्रेणी में
✈11वें गुणस्थान के लिये 21 प्रकृतियों का अंतरकरणरूप उपशम ✈चढ़ने और उतरने के 10वें गुणस्थान में भोगने के लिए संज्वलन लोभ की सूक्ष्म कृष्टि	✈20 प्रकृतियों का क्षय ✈10वें गुणस्थान में भोगने के लिये संज्वलन लोभ की सूक्ष्म कृष्टि

www.JainKosh.org

	अध:प्रवृत्तकरण	अपूर्वकरण	अनिवृत्तिकरण
परिणाम	ऊपर समय वाले जीवों के परिणाम नीचे समय वालों से मिलते हैं	प्रतिसमय अपूर्व (जो पहले न हुये हों) ऐसे नवीन परिणाम होते हैं	जहा संस्थानादि का भेद होने पर भी परिणामों में भेद नहीं
एक समयवर्ती जीवों के परिणाम	समान भी, भिन्न भी	समान भी, भिन्न भी	समान ही
भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम	समान भी, भिन्न भी	भिन्न ही	भिन्न ही
अनुकृष्टि रचना	होती है	नहीं होती है	नहीं होती है
परिणामों की संख्या	असंख्यात लोकप्रमाण (ऊपर-ऊपर समान वृद्धि सहित)	असंख्यात लोकप्रमाण (अध:प्रवृत्तकरण से असंख्यातगुणे)	असंख्यात—जितने इसके समय
काल — तीनों का अंतर्मुहूर्त	सबसे बड़ा	अध:प्रवृत्तकरण से संख्यात गुणा हीन	अपूर्वकरण से संख्यात गुणा हीन
उदाहरण	16 समय	8 समय	4 समय

ये करण के परिणाम और कहाँ-कहाँ होते हैं?

क्र.	पद	गुणस्थान
1	प्रथमोपशम सम्यक्त्व	1
2	अनंतानुबंधी की विसंयोजना	4 से 7
3	क्षायिक सम्यक्त्व	4 से 7
4	द्वितीयोपशम सम्यक्त्व	4 से 7
5	उपशम श्रेणी	7, 8, 9
6	क्षपक श्रेणी	7, 8, 9

www.JainKosh.org

धुदकोसुंभयवत्थं, होहि जहा सुहुमरायसंजुत्तं।
एवं सुहुमकसाओ, सुहुमसरागोत्ति णादव्वो ॥58॥

- अर्थ - जिस प्रकार धुले हुए कौसुंभी वस्त्र में लालिमा - सुर्खी सूक्ष्म रह जाती है, उसी प्रकार जो जीव अत्यन्त सूक्ष्म राग-लोभ कषाय से युक्त है, उसे सूक्ष्मसाम्पराय नामक दशम गुणस्थानवर्ती कहते हैं ॥58॥

www.JainKosh.org

सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान

निमित्त

सूक्ष्म संज्वलन लोभ का उदय

परिणाम

अत्यंत सूक्ष्म राग (लोभकषाय) से संयुक्त

उदाहरण

धुले हुए कौसुंभी वस्त्र के समान सूक्ष्म लालिमा

www.JainKosh.org

पुव्वापुव्वप्फड्डय-बादरसुहुमगयकिट्टि अणुभागा।
हीणकमाणंतगुणेण-वरादु वरं च हेट्ठस्स॥59॥

अर्थ - पूर्वस्पर्धक से अपूर्वस्पर्धक के और अपूर्वस्पर्धक से बादरकृष्टि के तथा बादरकृष्टि से सूक्ष्मकृष्टि के अनुभाग क्रम से अनंतगुणे-अनंतगुणे हीन हैं। और ऊपर के (पूर्व-पूर्व के) जघन्य से नीचे का (उत्तरोत्तर का) उत्कृष्ट और अपने-अपने उत्कृष्ट से अपना-अपना जघन्य अनंतगुणा अनंतगुणा हीन है ॥59॥

www.JainKosh.org

स्पर्धक

वर्गणाओं के समूह को स्पर्धक कहते हैं ।

स्थिति की अपेक्षा निषेक संज्ञा होती है और अनुभाग को बताने के लिए स्पर्धक संज्ञा है ।

शक्ति अपेक्षा वर्णन

जघन्य वर्गणा के 1 वर्ग में सबसे जघन्य शक्ति पायी जाती है । उसको संदृष्टि में ८ माना ।

अगली वर्गणा के 1 वर्ग की शक्ति इससे 1 अधिक पायी जाती है । संदृष्टि: ९

अगली वर्गणा के 1 वर्ग की शक्ति इससे 1 अधिक पायी जाती है । संदृष्टि: १०

ऐसे 1 स्पर्धक की प्रत्येक वर्गणा के 1-1 वर्ग की शक्ति एक-एक अविभाग-प्रतिच्छेद से बढ़ाना ।

उदाहरण में एक स्पर्धक की वर्गणा संख्या 4 मानी है ।

११

१० १०

९ ९ ९

८ ८ ८ ८

प्रथम स्पर्धक

यह स्पर्धक इस प्रकार से दर्शाया जाता है ।

www.JainKosh.org

१९

१८ १८

१७ १७ १७

१६ १६ १६ १६

द्वितीय स्पर्धक

द्वितीय स्पर्धक की प्रथम वर्गणा के 1 वर्ग की शक्ति जघन्य वर्ग से दुगुनी होती है ।

सूत्र: स्पर्धक के जघन्य वर्ग की शक्ति = जघन्य वर्ग × स्पर्धक की संख्या

द्वितीय स्पर्धक की जघन्य शक्ति = ८ × 2 = १६

इसके पश्चात् अगली-अगली वर्गणा के वर्ग एक-एक शक्ति से बढ़ते हैं ।

तृतीय स्पर्धक की जघन्य शक्ति = ८ × 3 = २४

चतुर्थ स्पर्धक की जघन्य शक्ति = ८ × 4 = ३२

ऐसे क्रम से अनंत स्पर्धकों में शक्ति बढ़ती-बढ़ती जानना ।

२७
२६ २६
२५ २५ २५
२४ २४ २४ २४
तृतीय स्पर्धक

३५
३४ ३४
३३ ३३ ३३
३२ ३२ ३२ ३२
चतुर्थ स्पर्धक

४३
४२ ४२
४१ ४१ ४१
४० ४० ४० ४०
पंचम स्पर्धक

पूर्व और अपूर्व स्पर्धक में अन्तर

पूर्व स्पर्धक

संसार-अवस्था में पाए जाने वाले कर्म की शक्ति समूहरूप

अपूर्व स्पर्धक

अनिवृत्तिकरण परिणामों से किए गए पूर्व स्पर्धकों की शक्ति के अनंतवें भाग शक्तिप्रमाण

www.JainKosh.org

कृष्टि

अनुभाग का कृष करना (घटाना)

www.JainKosh.org

स्पर्धक व कृष्टि में अन्तर

एक स्पर्धक से दूसरे स्पर्धक का अनुभाग थोड़ा ही अधिक है,

जबकि एक कृष्टि से दूसरी कृष्टि का अनुभाग अनन्त गुणा है ।

अनुभाग का क्रम

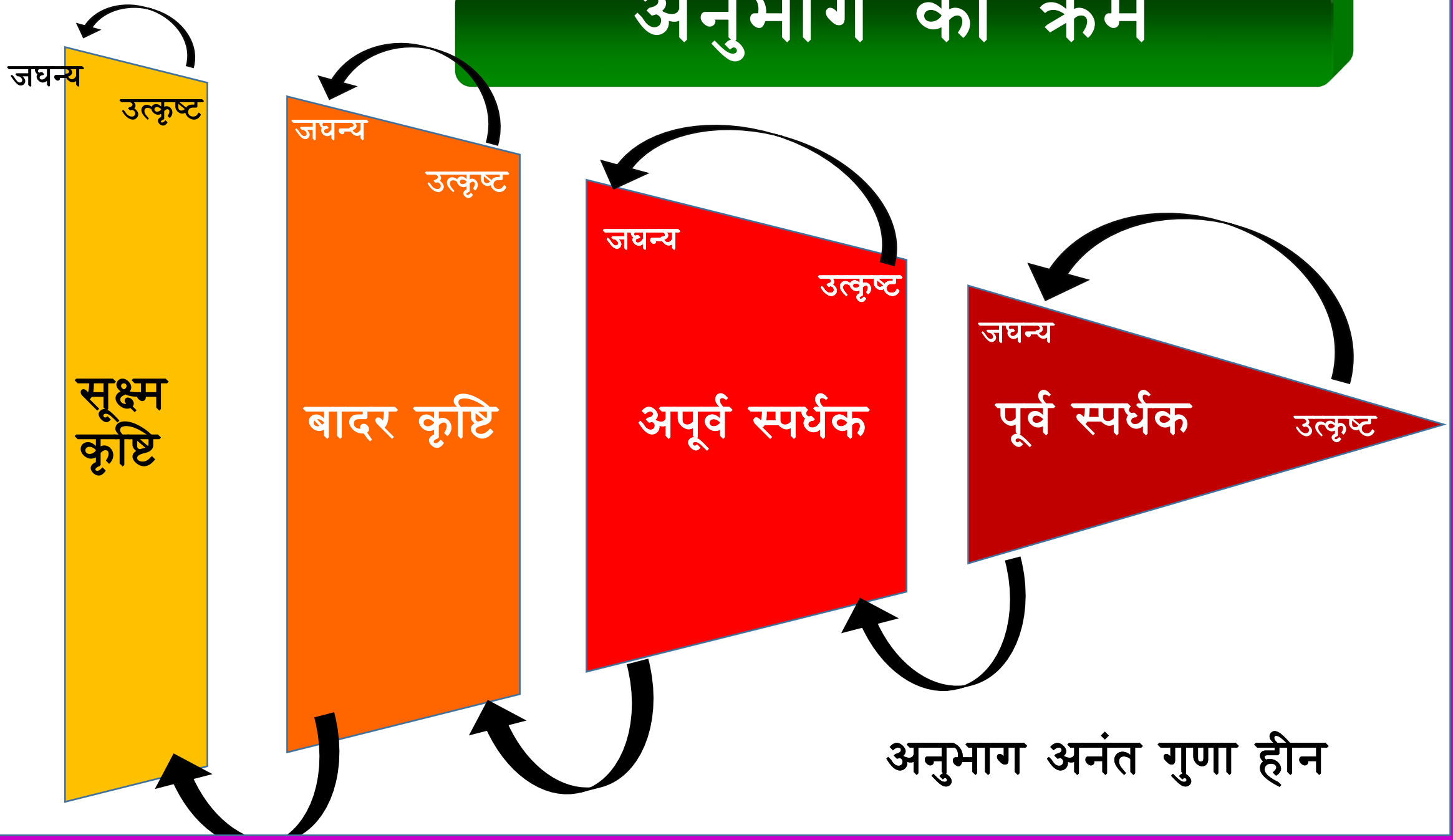
जघन्य
उत्कृष्ट
सूक्ष्म कृष्टि
जघन्य
उत्कृष्ट
बादर कृष्टि
जघन्य
उत्कृष्ट
अपूर्व स्पर्धक
जघन्य
पूर्व स्पर्धक
उत्कृष्ट
अनुभाग अनंत गुणा हीन

अपूर्व स्पर्धक, बादर कृष्टि और सूक्ष्म कृष्टि

अपूर्व स्पर्धक	कषाय-नोकषाय सभी के होते हैं
बादर कृष्टि	संज्वलन क्रोध, मान, माया लोभ की होती है
सूक्ष्म कृष्टि	सिर्फ संज्वलन लोभ की होती है

www.JainKosh.org

उपशम श्रेणी में सूक्ष्म कृष्टि
ही होती है,

अपूर्व स्पर्धक और बादर
कृष्टि नहीं की जाती ।

www.JainKosh.org

अणुलोहं वेदंतो, जीवो उवसामगो व खवगो वा।
सो सुहुमसांपराओ, जहखादेणूणओ किं चि ॥60॥

अर्थ - चाहे उपशम श्रेणी का आरोहण करनेवाला हो अथवा क्षपकश्रेणी का आरोहण करनेवाला हो, परन्तु जो जीव सूक्ष्मलोभ के उदय का अनुभव कर रहा है, ऐसा दशवें गुणस्थानवाला जीव यथाख्यात चारित्र से कुछ ही न्यून रहता है ॥60॥

www.JainKosh.org

6ठे से 10वे गुणस्थान में संज्वलन का उदय कैसा ?

गुणस्थान	संज्वलन का उदय
6	तीव्र
7	मंद
8	मंदतर
9	मंदतम
10	सूक्ष्म

inKosh.

चारित्र की वृद्धि

सामायिक, छेदोपस्थापना चारित्र

इससे अधिक

सूक्ष्म सांपराय चारित्र

इससे अधिक

यथाख्यात चारित्र

www.JainKosh.org

कदकफलजुदजलं वा, सरए सरवाणियं व णिम्मलयं।
सयलोवसंतमोहो, उवसंतकसायओ होदि ॥61॥

अर्थ - निर्मली फल से युक्त जल की तरह, अथवा शरद ऋतु में ऊपर से स्वच्छ हो जाने वाले सरोवर के जल की तरह, सम्पूर्ण मोहनीय कर्म के उपशम से उत्पन्न होने वाले निर्मल परिणामों को उपशान्तकषाय नामक ग्यारहवाँ गुणस्थान कहते हैं ॥61॥

www.JainKosh.org

उपशान्तकषाय गुणस्थान

निमित्त

सर्व मोहनीय कर्म का उपशम

परिणाम

पूर्ण वीतराग निर्मल दशा

उदाहरण

1. निर्मली फल से सहित स्वच्छ जल

2. शरद-कालीन सरोवर का जल

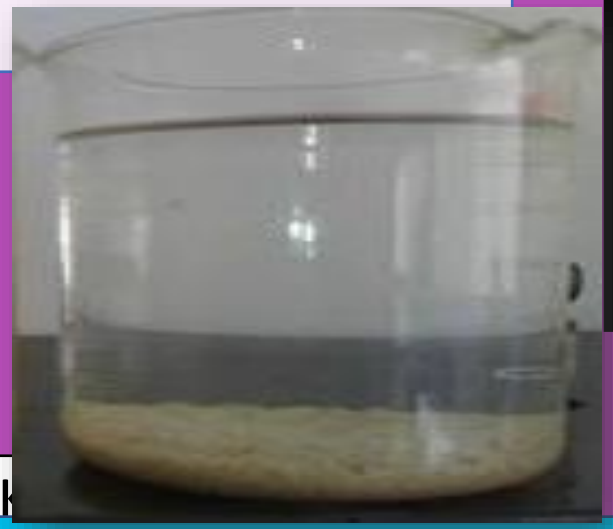

www.Jaink

उपशान्तकषाय गुणस्थान

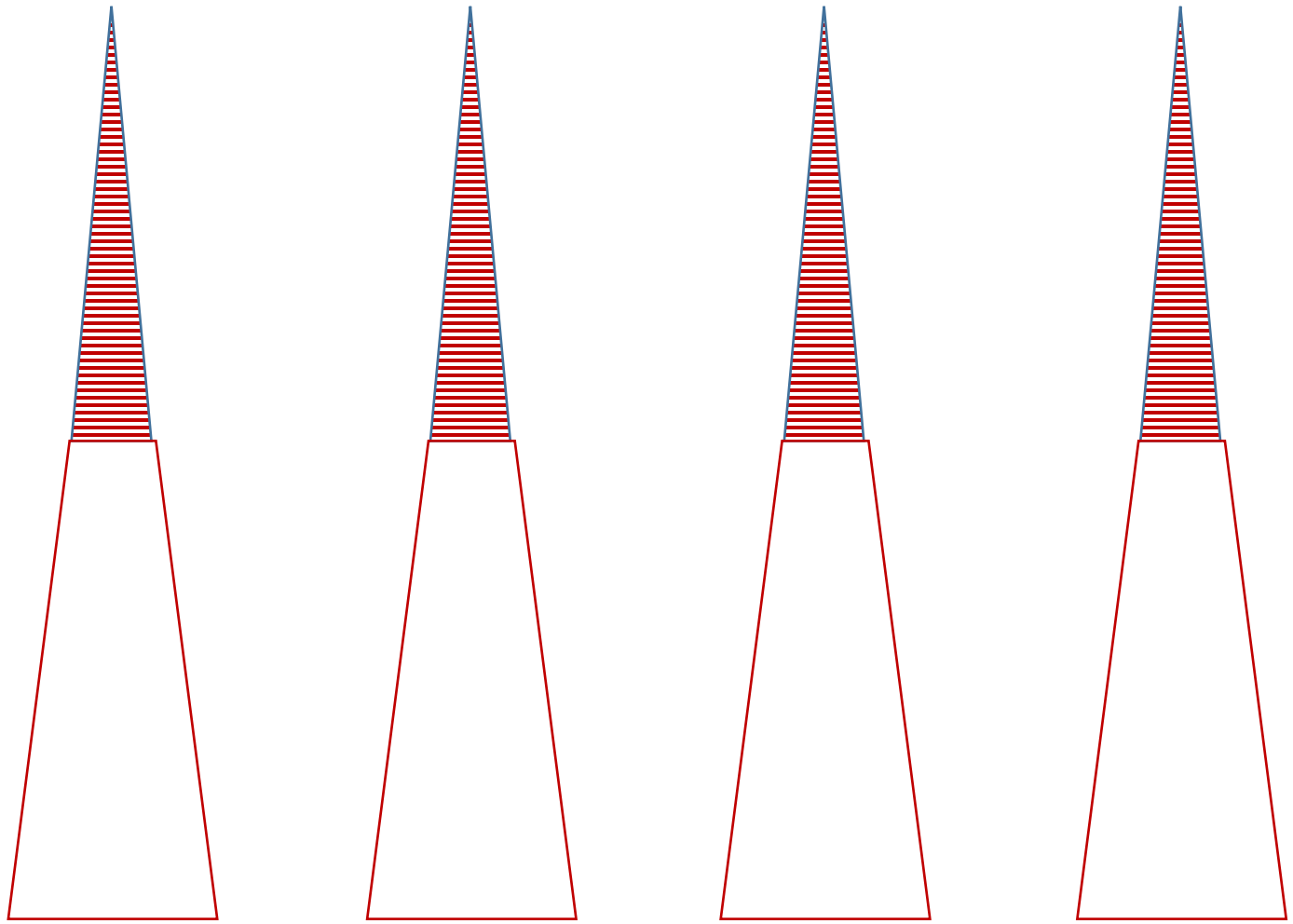

अप्रत्याख्यानावरण 4 प्रत्याख्यानावरण 4 संज्वलन 4 नोकषाय 9

उपशांतमोह गुणस्थान

कुल 21 प्रकृतियों का उपशम

उपशान्तकषाय गुणस्थान

इस गुणस्थान का काल अंतर्मुहूर्त है ।

उसके बाद नियम से नीचे के गुणस्थान में पतन होता है ।

इस गुणस्थान में मात्र साता वेदनीय का ईर्यापथ आस्रव होता है ।

11वे गुणस्थान से पतन के कारण

कालक्षय

नियम से दसवाँ गुणस्थान

भवक्षय

नियम से देवगति – चौथा गुणस्थान

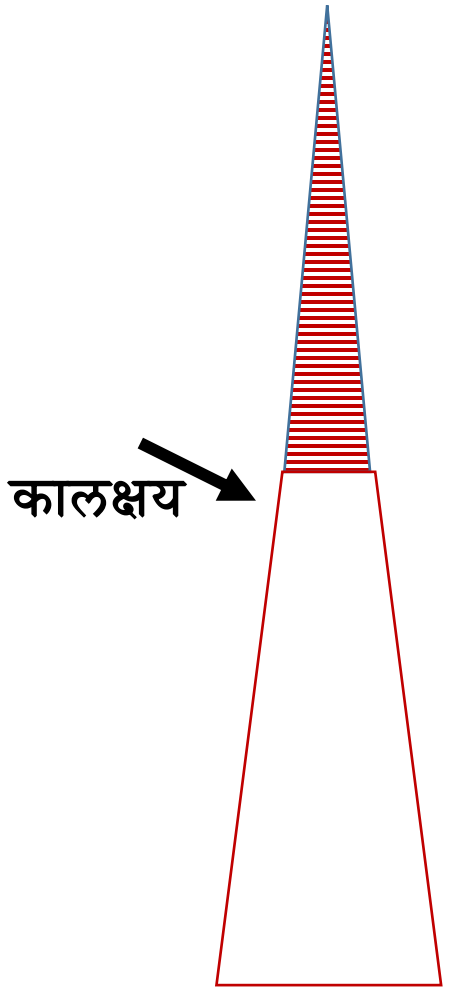

णिस्सेसखीणमोहो, फलिहामलभायणुदयसमचित्तो।
खीणकसाओ भण्णदि, णिग्गंथो वीयरायेहिं ॥62॥

अर्थ - जिस निर्ग्रन्थ का चित्त मोहनीय कर्म के सर्वथा क्षीण हो जाने से स्फटिक के निर्मल पात्र में रखे हुए जल के समान निर्मल हो गया है उसको वीतराग देव ने क्षीणकषाय नाम का बारहवें गुणस्थानवर्ती कहा है ॥62॥

www.JainKosh.org

क्षीणकषाय गुणस्थान

निमित्त

सर्व मोहनीय कर्म का क्षय

परिणाम

अत्यंत निर्मल वीतरागी परिणाम

उदाहरण

स्फटिक मणि के पात्र में रखा निर्मल जल

www.JainKosh.org

क्षीणकषाय गुणस्थान

इस गुणस्थान के अंत में ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अंतराय कर्म का नाश हो जाता है ।

इस गुणस्थान में मात्र साता वेदनीय का ईर्यापथ आस्रव होता है ।

इस गुणस्थान का काल अंतर्मुहूर्त है ।

www.JainKosh.org

केवलणाणदिवायरकिरण-कलावप्पणासियण्णाणो।
णवकेवललद्धुग्गम, सुजणियपरमप्पववएसो ॥63॥
असहायणाणदंसण-सहिओ इदि केवली हु जोगेण।
जुत्तो ति सजोगिजिणो, अणाइणिहणारिसे उत्तो ॥64॥

अर्थ - जिन्होंने केवलज्ञानरूपी सूर्य की अविभागप्रतिच्छेदरूप किरणों के समूह से शिष्यों के अज्ञान-अन्धकार को नष्ट कर दिया है और जिसको नव केवललब्धियों के (क्षायिक-सम्यक्त्व, चारित्र, ज्ञान, दर्शन, दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य) प्रकट होने से 'परमात्मा' यह व्यपदेश (संज्ञा) प्राप्त हो गया है, वह इन्द्रिय-आलोक आदि की अपेक्षा न रखने वाले ज्ञान-दर्शन से युक्त होने के कारण केवली और योग से युक्त रहने के कारण सयोग तथा घाति कर्मों से रहित होने के कारण जिन कहा जाता है, ऐसा अनादिनिधन आर्ष आगम में कहा है ॥63-64॥

www.JainKosh.org

परार्थरूप संपदा

सूर्य की किरणों के समूह समान केवलज्ञान के द्वारा दिव्यध्वनि से पदार्थ प्रकाशित कर शिष्यों के अज्ञान-अंधकार को नष्ट करते हैं

स्वार्थरूप संपदा

नव केवल लब्धि सहित होने से परमात्मा हैं

क्षायिक सम्यक्त्व, चारित्र, ज्ञान, दर्शन, दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य

www.JainKosh.org

सयोग-केवली-जिन

सयोग	केवली	जिन
• योग-सहित होने से	• असहाय (पर की सहायरहित) ज्ञान-दर्शन होने से	• घाति कर्मों का समूल नाश करने से

www.JainKosh.org

सीलेसिं संपत्तो, णिरुद्धणिस्सेसआसवो जीवो।
कम्मरयविप्पमुक्को, गयजोगो केवली होदि ॥65॥

- अर्थ - जो अठारह हजार शील के भेदों के स्वामी हैं,
- जिनके कर्मों के आने का द्वाररूप आस्रव सर्वथा बन्द हो गया है तथा
- सत्त्व और उदयरूप अवस्था को प्राप्त कर्मरूप रज की सर्वथा निर्जरा होने से कर्मों से सर्वथा मुक्त होने के सम्मुख है,
- उन योगरहित केवली को चौदहवें गुणस्थानवर्ती अयोग-केवली कहते हैं ॥65॥

www.JainKosh.org

अयोग केवलीजिन

अठारह हजार शील के भेदों के स्वामी

सर्व आस्रव निरोधक

सत्त्व और उदय प्राप्त कर्मरज से मुक्त होने के सम्मुख

योगरहित

केवली

www.JainKosh.org

सम्मत्तुप्पत्तीये, सावयविरदे अणंतकम्मंसे।
दंसणमोहक्खवगे, कसायउवसामगे य उवसंते ॥66॥
खवगे य खीणमोहे, जिणेसु दव्वा असंखगुणिदकमा।
तव्विवरीया काला, संखेज्जगुणक्कमा होंति ॥67॥

अर्थ - सम्यक्त्वोत्पत्ति अर्थात् सातिशय मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि, श्रावक, विरत, अनंतानुबन्धी कर्म का विसंयोजन करनेवाला, दर्शनमोहनीय कर्म का क्षय करनेवाला, कषायों का उपशम करने वाले 8-9-10वें गुणस्थानवर्ती जीव, उपशान्तकषाय, कषायों का क्षपण करनेवाले 8-9-10वें गुणस्थानवर्ती जीव, क्षीणमोह, सयोगी और अयोगी दोनों प्रकार के जिन – इन ग्यारह स्थानों में द्रव्य की अपेक्षा कर्मों की निर्जरा क्रम से असंख्यातगुणी-असंख्यातगुणी अधिक-अधिक होती जाती है और उसका काल इससे विपरीत है। क्रम से उत्तरोत्तर संख्यातगुणा-संख्यातगुणा हीन है ॥66-67॥

www.JainKosh.org

गुणश्रेणी निर्जरा के स्थान

स्थान	स्वरूप	स्वामी (गुणस्थान अपेक्षा)
सातिशय मिथ्यादृष्टि	प्रथमोपशम सम्यक्त्व की उत्पत्ति के समय करण लब्धि के अंतिम समय में वर्तमान जीव	1
1. सम्यग्दृष्टि	अव्रती श्रावक	4
2. श्रावक	व्रती श्रावक	5
3. विरत	मुनि	6-7
4. अनंतानुबंधी वियोजक	अनंतानुबंधी को अप्रत्याख्यानावरण आदि रूप विसंयोजित करने वाला	4-7

स्थान	स्वरूप	स्वामी (गुणस्थान अपेक्षा)
5. दर्शनमोह क्षपक	दर्शनमोह का क्षय करने वाला	4-7
6. उपशामक	चारित्रमोह दबाने वाला	उपशम श्रेणी 8-10
7. उपशांत कषाय	चारित्रमोह दबने पर	11
8. क्षपक	चारित्रमोह को क्षय करने वाला	क्षपक श्रेणी 8-10
9. क्षीण मोह	चारित्रमोह के क्षय होने पर	12
10. स्वस्थान सयोगी जिन	घातिया कर्मों का क्षय करने के बाद योग-सहित	13
11. समुद्घातगत सयोगी जिन	समुद्घात अवस्था को प्राप्त सयोगकेवली जिन	13

उदाहरण

संख्यात का प्रमाण 2 माना, और असंख्यात का प्रमाण 5 माना ।

	निर्जरा हेतु द्रव्य	बांटने योग्य आयाम	एक निषेक को प्राप्त औसत
1	10,000	2096	5
2	50,000	1024	50
3	2,50,000	512	500
4	12,50,000	256	5000
5	62,50,000	128	50000

प्रतिस्थान में द्रव्य असंख्यातगुणा बढ़ता है और
गुणश्रेणी आयाम का काल संख्यातगुणा हीन होता है ।

अट्ठविहकम्मवियला, सीदीभूदा णिरंजणा णिच्चा।
अट्ठगुणा किदकिच्चा, लोयग्गणिवासिणो सिद्धा ॥68॥
सदसिव संखो मक्कडि, बुद्धो णेयाइयो य वेसेसी।
ईसरमंडलिदंसण, विदूसणट्ठं कयं एदं ॥69॥

अर्थ - जो ज्ञानावरणादि अष्ट कर्मों से रहित हैं, अनंतसुखरूपी अमृत के अनुभव करनेवाले शान्तिमय हैं, नवीन कर्मबंध को कारणभूत मिथ्यादर्शनादि भावकर्मरूपी अञ्जन से रहित हैं, सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, अव्याबाध, अवगाहन, सूक्ष्मत्व, अगुरुलघु, ये आठ मुख्य गुण जिनके प्रकट हो चुके हैं, कृतकृत्य हैं, लोक के अग्रभाग में निवास करनेवाले हैं, उनको सिद्ध कहते हैं ॥68॥

अर्थ - सदाशिव, सांख्य, मस्करी, बौद्ध, नैयायिक और वैशेषिक, कर्तृवादी (ईश्वर को कर्त्ता मानने वाले), मण्डली इनके मतों का निराकरण करने के लिये ये विशेषण दिये हैं ॥69॥

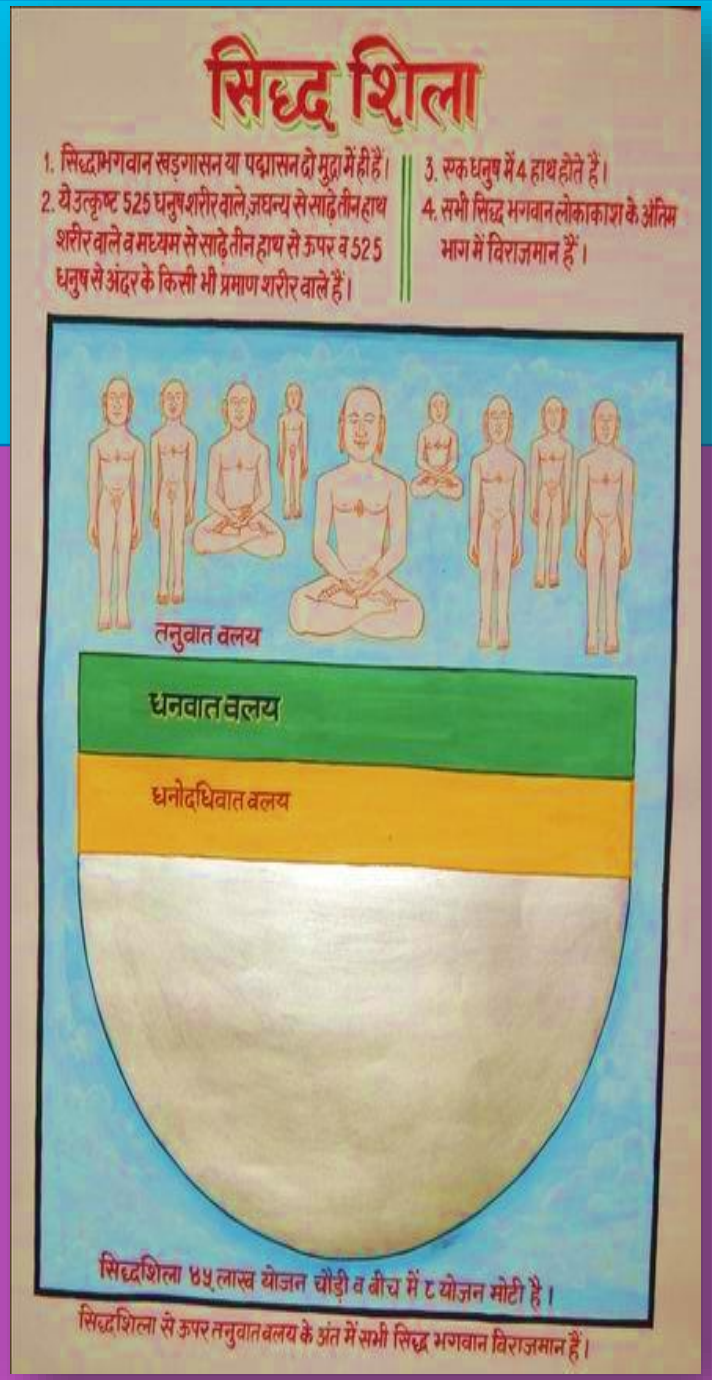

www.JainKosh.org

सिद्धों के विशेषण एवं आठ मतों का खण्डन

विशेषण	किस मत का खण्डन	मत की मान्यता (जीव....	निराकरण
ज्ञानावरणादि आठ कर्मों से रहित	सदाशिव	....सदा कर्म से रहित हैं	मुक्ति होने पर ही कर्म से रहित होता है
	मीमांसक	.... के मुक्ति नहीं	कर्मरहित होने पर मुक्ति होती है
सुख-स्वरूप	सांख्यमत	....को मुक्ति में सुख नहीं	सर्व दु:खों का अभाव कर जीव ही मुक्ति में सुखी होता है
निरंजन (भाव कर्मों से रहित)	मस्करी संन्यासी	.... मुक्ति होने पर संसार में पुन: आते हैं	भाव कर्म के अभाव में नवीन द्रव्य कर्म नहीं होते । उसके अभाव में संसार नहीं होता

विशेषण	किस मत का खण्डन	मत की मान्यता (जीव....	निराकरण
नित्य	बौद्ध	.... क्षणिक है	सूक्ष्म अर्थपर्याय का उत्पादव्यय, परंतु द्रव्य सदा नित्य
आठ गुणों से सहित	नैयायिक, वैशेषिक	.... को मुक्ति में बुद्धि आदि गुणों का विनाश होता है	अनंतानंत गुण प्रकट होते हैं
कृतकृत्य (कुछ करना शेष नहीं)	ईश्वर सृष्टिवाद	ईश्वर सृष्टि बनाता हैं	सकल कर्म नाश होने पर कुछ करना शेष नहीं रहता
लोक के अग्र भाग में स्थित	मण्डली	.... सदा ऊपर को गमन करता, कभी ठहरता नहीं	लोक के आगे धर्मास्तिकाय का अभाव होने से तनुवातवलय में स्थित रहता हैं

गुणस्थान : कुछ रोचक तथ्य

विग्रह गति में प्रथम, द्वितीय एवं चतुर्थ गुणस्थान ही होते हैं ।

तीसरे, बारहवें एवं तेरहवें गुणस्थान में जीव की मृत्यु नहीं होती ।

क्षपक श्रेणी के किसी भी गुणस्थान में मरण नहीं होता ।

उपशम श्रेणी के आठवें गुणस्थान के प्रथम भाग में भी मरण नहीं होता ।

www.JainKosh.org

गुणस्थान : कुछ रोचक तथ्य

संसार में पहला, चौथा, पाँचवाँ, छठवाँ, सातवाँ और तेरहवाँ इन गुणस्थानों में जीव सदा विद्यमान रहते ही हैं ।

बारहवाँ, तेरहवाँ, चौदहवाँ एवं क्षपकश्रेणी का आठवाँ, नौवाँ और दसवाँ ये गुणस्थान अप्रतिपाति हैं ।

जिसके नरक, तिर्यंच और अगली मनुष्य-आयु की सत्ता हो वे जीव अविरत सम्यक्त्व से ऊपर के गुणस्थानो में प्रवेश नहीं कर सकता ।

सासादन गुणस्थान में मरण हो तो जीव नरक में नहीं जाता ।

www.JainKosh.org

गुण स्थानों में गमना गमन

13	→	14 अयोग केवली	→	सिद्ध भगवान
12	→	13 सयोग केवली	→	14
10	→	12 क्षीण मोह	→	13
10	→	11 उपशांत मोह	→	10, 4!
11, 9	→	10 सूक्ष्म साम्पराय	→	12, 11, 9, 4!
10, 8	→	9 अनिवृत्तिकरण	→	10, 8, 4!
9,7	→	8 अपूर्वकरण	→	9,7,4!
8,6,5,4,1	→	7 अप्रमत्तविरत	→	8,6,4!
7	→	6 प्रमत्तविरत	→	7,5,4,3,2,1
6,4,1	→	5 देशविरत	→	7,4,3,2,1
11, 10, 9, 8, 7, 6, 5, 3, 1	→	4 अविरत सम्यक्त्व	→	7,5,3,2,1
6,5,4,1	→	3 मिश्र	→	1,4
6, 5, 4	→	2 सासादन	→	1
6, 5, 4, 3, 2	→	1 मिथ्यात्व	→	3*, 4, 5, 7

गुणस्थानों में काल अपेक्षा विचार

गुणस्थान	उत्कृष्ट काल	जघन्य काल
1.मिथ्यात्व	अनादि अनंत या अनादि सांत या सादि सांत—कुछ कम अर्द्ध पुद्गल परावर्तन	अंतर्मुहूर्त
2.सासादन	छह आवली	एक समय
3.मिश्र	अंतर्मुहूर्त	अंतर्मुहूर्त
4.अविरत	साधिक तैतीस सागर	अंतर्मुहूर्त
5.देशविरत	1 पूर्वकोटि वर्ष – 1 अंतर्मुहूर्त	अंतर्मुहूर्त
6.प्रमत्तसंयत	एक अंतर्मुहूर्त	एक समय
7.अप्रमत्तसंयत	एक अंतर्मुहूर्त	एक समय

www.JainKosh.org

गुणस्थानों में काल अपेक्षा विचार

गुणस्थान	उत्कृष्ट काल	जघन्य काल
8.अपूर्वकरण	एक अंतर्मुहूर्त	एक समय
9.अनिवृत्तिकरण	एक अंतर्मुहूर्त	एक समय
10.सूक्ष्मसाम्पराय	एक अंतर्मुहूर्त	एक समय
11.उपशान्तमोह	एक अंतर्मुहूर्त	एक समय
12.क्षीणमोह	जघन्य, उत्कृष्ट = अंतर्मुहूर्त	
13.सयोगकेवली	8 वर्ष और अन्तर्मुहूर्त कम 1 कोटि पूर्व	अंतर्मुहूर्त
14.अयोगकेवली	जघन्य, उत्कृष्ट = अंतर्मुहूर्त = अ,इ,उ,ऋ,ऌ का उच्चारण काल	

www.JainKosh.org

गुणस्थानों में भाव

गुणस्थान	भाव	अपेक्षा
1	औदयिक	दर्शन मोहनीय
2	पारिणामिक	
3	क्षायोपशमिक	
4	औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक	

गुणस्थानों में भाव

गुणस्थान	भाव	अपेक्षा
5	क्षायोपशमिक	चारित्र मोहनीय
6 - 7	क्षायोपशमिक	
8, 9, 10, 11 (उपशम श्रेणी)	औपशमिक	
8, 9, 10, 12 (क्षपक श्रेणी)	क्षायिक	
13, 14, सिद्ध	क्षायिक	

- Reference : गोम्मटसार जीवकाण्ड, सम्यग्ज्ञान चंद्रिका, गोम्मटसार जीवकांड रेखाचित्र एवं तालिकाओं में
- Presentation created by : Smt. Sarika Vikas Chhabra
- For updates / comments / feedback / suggestions, please contact

- sarikam.j@gmail.com
- www.jainkosh.org
- ☎: 94066-82889